संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित
ऋषि प्रसाद
श्रीकृष्ण जन्माष्टमी : ७ सितंबर
हिन्दी
अगस्त ०४
मूल्य : रु. ६/-
भगवान श्रीकृष्ण
बाल-गोपालों से लेकर
बड़े-बड़े विद्वानों तक को
आनंद देनेवाले
प्रेमावतार हैं ।
परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू
कर्म के दो प्रकार :
स्वाभाविक कर्म और नवीन कर्म
पढ़ें पृष्ठ : ६

अमदावाद आश्रम में पूज्य बापूजी के सान्निध्य में जीवन का सर्वांगीण विकास करनेवाले विविध प्रयोग सीखते हुए संत श्री आसारामजी पब्लिक स्कूल (आगरा) के सौभाग्यशाली छात्र ।

स्मृतिवर्धक डायनामो : सारस्वत्य मंत्रजप

सहज-सरल बुद्धिशक्तिवर्धक प्रयोग

प्रयोग छोटा-सा, लाभ ढेर सारे : ताड़ासन

पूज्य बापूजी की परम हितकारी अमृतवाणी से संकलित नवीनतम, अनमोल सत्साहित्य-रत्न

जीवन को उन्नत बनानेवाली सुंदर युक्तियाँ

जीवनोपयोगी कुंजियाँ

कर्मकुशल बनने हेतु पढ़िये, समझिये

कर्म का अकाट्य सिद्धांत

आदर्श नारियों के प्रेरणाप्रद चरित्र

नारी ! तू नारायणी

पूज्य बापूजी की प्रेरणा से चलाया जा रहा है... 'पर्यावरण-सुरक्षा कार्यक्रम'

पूज्यश्री के सभी आश्रमों में तुलसी, आँवला, पीपल, नीम, बड़ आदि के वृक्ष लगाये गये हैं । ये वृक्ष पर्यावरण-सुरक्षा की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं, साथ ही मानव को स्वास्थ्य-लाभ, लौकिक लाभ एवं आध्यात्मिक लाभ प्रदान कर मानव-जीवन को समृद्ध बनाते हैं । इनकी आत्यंतिक उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए हमारे ऋषि-मुनियों ने इनके पूजन का विधान कर इनके संरक्षण-संवर्धन की भी सुंदर व्यवस्था की है । भगवान श्रीकृष्ण ने पीपल को अपना स्वरूप बताया है । तुलसी को 'विष्णुप्रिया' कहा गया है । आँवले को 'आदिवृक्ष' बताया गया है । पुराने जानकार वैद्य नीम को 'आधा वैद्य' मानते हैं ।

सभी भारतवासियों तथा केन्द्र एवं राज्य सरकारों से निवेदन है कि घरों के आसपास तथा सार्वजनिक जगहों, सड़कों के किनारों, वनों आदि स्थानों पर इन वृक्षों का अधिक-से-अधिक संख्या में रोपण कर पर्यावरण-सुरक्षा के इस दैवी कार्य में सहभागी हों ।

(शेष भाग पृष्ठ २९ पर)

पीपल : स्पर्शमात्र से रोग-प्रतिकारक शक्ति एवं बुद्धिशक्ति में वृद्धि, मनःशुद्धि ।

तुलसी : ओजोन-उत्सर्जक, प्रदूषण-नाशक, त्रिदोषनाशक ।

आँवला : दर्शन, सेवन, स्नान-पुण्यप्रद, लक्ष्मीप्रदायक, दुष्ट शक्तियों का नाशक ।

नीम : शीतल, कीटाणुनाशक, रोगप्रतिकारक, वायु-स्वास्थ्यप्रदायक ।
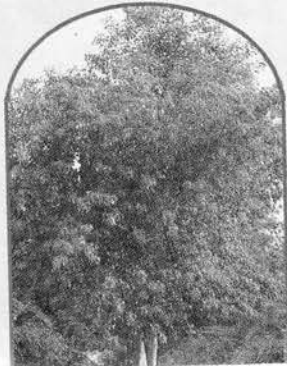
ऋषि प्रसाद

वर्ष : १५ अंक : १४०
अगस्त २००४ मूल्य : रु. ६-००
मलमास-श्रावण, वि.सं.२०६१

सदस्यता शुल्क

भारत में

(१) वार्षिक : रु. ५५/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक : रु. २००/-
(४) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में

(१) वार्षिक : रु. ८०/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १५०/-
(३) पंचवार्षिक : रु. ३००/-
(४) आजीवन : रु. ७५०/-

विदेशों में

(१) वार्षिक : US $ 20
(२) द्विवार्षिक : US $ 40
(३) पंचवार्षिक : US $ 80
(४) आजीवन : US $ 200

कार्यालय **'ऋषि प्रसाद'** श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) २७५०५०१०-११.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : कौशिक वाणी
प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
मुद्रण स्थल : हार्दिक वेबप्रिंट, राणीप और विनय प्रिंटिंग प्रेस, अमदावाद।
सम्पादक : कौशिक वाणी
सहसम्पादक : प्रे. खो. मकवाणा

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक अथवा सदस्यता क्रमांक अवश्य लिखें।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction

अनुक्रम

✻ पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग ✻

✻ **सोनी चैनल** पर 'संत आसारामजी वाणी' प्रतिदिन सुबह ७-०० बजे। ✻ **संस्कार चैनल** पर 'परम पूज्य लोकसंत श्री आसारामजी बापू की अमृतवर्षा' रोज दोप. २-०० बजे तथा रात्रि ९-४० बजे। ✻ **आस्था चैनल** पर 'संत श्री आसारामजी बापू की अमृतवाणी' सुबह ८-०० तथा दोप. २-३० बजे। ✻ **साधना चैनल** पर 'संत श्री आसारामजी बापू की सत्संग-सरिता' रोज रात्रि ९-०० बजे।
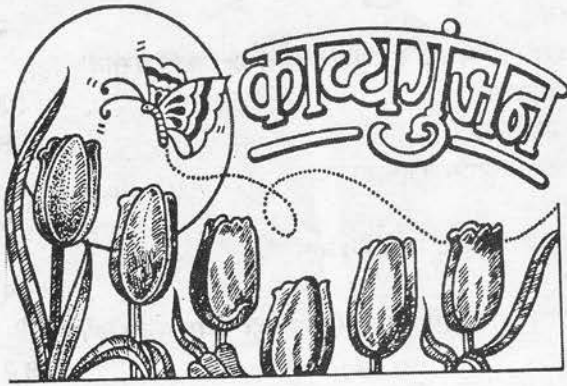
रक्षाबंधन

रक्षाबंधन का त्यौहार,
अटूट भैया-बहना का प्यार ।
निःस्वार्थ भाव है सुख सार,
छलके आनंद रस अपार ॥

परम स्नेह की बाँध ले राखी,
सारे जीवन का हो 'साक्षी' ।
रहे न द्वैत, दोष, भय बाकी,
मधुर वचन है अमूल्य उपहार ॥

निर्दोष प्रेम है मधुर मिष्टान्न,
शील धर्म है सुख की खान ।
समता है सद्गुण महान,
सहज, सरल हो सद्व्यवहार ॥

लज्जा है बहना का गहना,
संयम, संजीदगी से रहना।
सदा सत्य, सार ही कहना,
खोल दे मन-मंदिर के द्वार ॥

सर्व सदा हो आत्म-विचार,
शुद्ध, सुपाच्य, सात्त्विक आहार ।
पावन हृदय हो निर्विकार,
जीवन बगिया को सँवार ॥

रक्षा कर हृदय-कोष की,
जगे वृत्ति शम-संतोष की।
नहीं रोष, जोश, मदहोश की,
गुरुज्ञान से अंतर निखार ॥

*

माधव वह मुरलीवाला

छलका दिया है गुरु ने, हरि-जाम रस निराला ।
भर-भर पिला दिया है, प्रभु-प्रेम का ये प्याला ॥
छायी बेखुदी की मस्ती, मिट गयी अहं की हस्ती ।
जागा है फिर मुसाफिर, अविद्या में सोनेवाला ॥
लहराया सुख का सागर, भर ली हृदय की गागर ।
उठी आनंद की तरंगें, हुआ पार डूबनेवाला ॥
जगी ज्योति मन-मंदिर में, हुई रोशनी अंतर में ।
मिटा अहं अज्ञान अँधेरा, हुआ ज्ञान का उजाला ॥
है लहू की रंगतों में, 'साक्षी' है धड़कनों में ।
हर नूर हर नजर में, है उसीका बोलबाला ॥
हर दिल के आईने में, स्वरूप वह सुहाना ।
सर्व में है समाया, माधव वह मुरलीवाला ॥

– **'साक्षी'**

*

'ऋषि प्रसाद'

हम बड़े खुशनशीब हैं,
हमारे घर आती है 'ऋषि प्रसाद' ।
वर्षों से लगे हैं हम नश्वर कमाने में,
हरिनाम की सच्ची दौलत लुटाती है 'ऋषि प्रसाद'।
मरने के बाद कहीं मिलेंगे खुदा,
ना-ना, जीते-जी उनसे मिलाती है 'ऋषि प्रसाद' ।
चिंता, तनाव, टेन्शन कोई अर्थ नहीं इन शब्दों का,
असली सुख दिलाती है 'ऋषि प्रसाद' ।
खाने-पीने, सोने के सिवा जीवन में,
क्या है सच्चा फर्ज बताती है 'ऋषि प्रसाद' ।
धन, दौलत, सुख-शोहरत सब सपना है,
गुरुज्ञान की सच्ची दौलत बरसाती है 'ऋषि प्रसाद' ।
पन्ने-पन्ने में रहस्य है, बापू की हितकारी वाणी है,
जीवन को खूबसूरत बनाती है 'ऋषि प्रसाद' ।
'तू ही है सब कुछ, सब कुछ तुझीमें',
मानव की सच्ची हैसियत बताती है 'ऋषि प्रसाद'।
तेरे भीतर भरा है सुख का समंदर,
बाहर भटकने की आदत छुड़ाती है 'ऋषि प्रसाद' ।

– **'जीवन'**

*

ओंकार उपासना

व्यासपूर्णिमा के बाद अपने एकांत के दिनों में आध्यात्मिक आभामंडल से ओतप्रोत अमदावाद आश्रम में जप-साधना-अनुष्ठान में संलग्न साधकों को संबोधित करते हुए ब्रह्मनिष्ठ पूज्य बापूजी के श्रीमुख से निःसृत सहज उद्गार :

ओंकार मंत्र की शक्ति अद्‌भुत है । संसार के सब शब्द आहत हैं अर्थात् आघात या टकराव से पैदा होते हैं । 'ॐ' अनहद (अनाहत) नाद है । जैसे पुल सड़क के दो छोरों को जोड़ देता है, ऐसे ही पवित्र ओंकार जीवात्मा को परमात्मा से जोड़ देता है ।

ओंकार का उच्चारण करने से मन सीधे अव्यक्त परमात्मा में लग जाता है । जो लोग ओंकार का जप करते हैं, 'हरि ॐ... हरि ॐ...' जपते हैं, उनके द्वारा उगायी गयी सब्जी में भी 'ॐ' अंकित होने की घटनाएँ घटी हैं । छिंदवाड़ा (म.प्र.) के अपने 'महिला उत्थान आश्रम' में उगाये गये बैंगन काटे गये तो उनमें 'ॐ' की आकृति पायी गयी । 'हरि ॐ... हरि ॐ...' जपते हुए वहाँ की साधिकाओं ने बैंगन के पौधों को पानी सींचा तो बैंगनों में ओंकार की आकृति बन गयी ।

चण्डीगढ़ के सत्संग-कार्यक्रम में साधकों को 'ॐ... ॐ... हरि ॐ...' इस प्रकार कीर्तन करवाया गया । उसका ऐसा प्रभाव पड़ा कि साधकों के लिए जो रोटियाँ बन रही थीं, उन पर 'ॐ' अंकित होने लगा ।

जो माताएँ-देवियाँ घर में भी 'हरि ॐ... हरि ॐ...' का जप करते हुए रोटियाँ बनाती हैं, कई बार उनकी रोटियों पर भी 'ॐ' अंकित हो जाता है । क्यों ? क्योंकि यह अनहद नाद है ।

'ॐ' के रहस्य को जानने के लिए रूस के वैज्ञानिकों ने कुछ प्रयोग किये तो वे आश्चर्यचकित हो उठे । उन्होंने देखा कि जब व्यक्ति बाहर एक शब्द बोले और अपने भीतर दूसरे शब्द का विचार करे, तब उनकी सूक्ष्म मशीन में दोनों शब्द अंकित हो जाते थे । उदाहरणार्थ : बाहर से 'क' कहा गया हो और भीतर विचार 'ग' का किया गया हो तो 'क' और 'ग' दोनों छप जाते थे । यदि बाहर कोई शब्द न बोले, केवल भीतर विचार करे तो विचारा गया शब्द भी अंकित हो जाता था ।

किंतु एकमात्र 'ॐ' ही ऐसा शब्द था कि व्यक्ति केवल बाहर से 'ॐ' बोले और अंदर दूसरा ही कुछ विचारे फिर भी दोनों ओर का 'ॐ' ही अंकित होता था । अथवा अंदर 'ॐ' का विचार करे और बाहर कुछ भी बोले तब भी अंदर-बाहर का 'ॐ' ही छपता था ।

ओंकार की उपासना में बड़ा बल है । ओंकार का १२,००० जप अर्थात् लगभग ११५ मालाएँ प्रतिदिन करें । जप के पहले १० प्राणायाम करें । यथासंभव मौन रखें । नीच कर्मों का त्याग करें । भोजन सात्त्विक एवं हक का हो । झूठ-कपट छोड़ दें और ईश्वरप्राप्ति के लिए ही जप करें ।

यदि कोई 'ॐ' का प्रतिदिन १२,००० जप करे और वासना मिटाने के संकल्प में १२ महीने लगा रहे तो उसे अपने-आपमें तृप्ति का अनुभव होगा, उसमें सामर्थ्य आयेगा और ईश्वरप्राप्ति हो जायेगी । यदि तीव्र तड़प हो तो ३ या ६ महीने में भी ईश्वरप्राप्ति हो सकती है ।

वर्तमान में भारतवासियों का ज्यादा शोषण हो रहा है, इसलिए अब 'ॐ' का जप एवं कीर्तन करें ताकि भारतवासी बलवान बनकर अपने अधिकारों की रक्षा करने में सक्षम बनें । अब 'ॐ ॐ आनंद, ॐ ॐ साहस, ॐ ॐ आरोग्य...' इस प्रकार का उच्चारण-जप अधिक लाभदायक है । इससे एकदम जल्दी फायदा होगा ।

ओंकार प्रथम ध्वनि है । जब किसीके घर बच्चा पैदा होता है, फिर चाहे वह ईसाई का घर हो या मुसलमान का, पारसी का घर हो या हिन्दू का, लेकिन जब वह शिशु रोता है तो 'ऊँआ... ऊँआ...' ही करता है । यह ओंकार से मिलती-जुलती ध्वनि है ।

सिख धर्म का आदिग्रंथ है 'जपुजी साहिब', जिसका पहला वचन है : **१ ओंकार सतिनामु...**

'कठोपनिषद्' का एक उत्तम मंत्र है जिसे सुनने का भी बड़ा पुण्य माना गया है। वह मंत्र है :

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति
तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत्तेपदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत् ॥

'संपूर्ण वेद जिस पद का प्रतिपादन करते हैं, समस्त तपों को जिसकी प्राप्ति के साधन कहते हैं और जिसकी इच्छा से (मुमुक्षुजन) ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, उस पद को मैं तुमसे संक्षेप में कहता हूँ। 'ॐ' यही वह पद है।' (कठोपनिषद्: अध्याय १, वल्ली २, मंत्र १५)

सारी सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय जिस सच्चिदानंद परमात्मा से होता है, उसका स्वाभाविक नाम है 'ॐ'।

ओंकार सारे मंत्रों का सार है। सारे वेदों, सारे कर्मों, सारी साधनाओं, सारे विवाहों, सारे विधि-विधानों के आरंभ में ओंकार का उच्चारण किया जाता है।

जैसे पृथ्वी सभी वृक्षों, जलाशयों, भूचरों, जलचरों, खेचरों का आधार है, ऐसे ही परमात्मा सबका आधार है और उसका वाचक है 'ॐ'।

इस ओंकार की जितनी महिमा गायी जाय, कम है। आपकी कोशिकाओं, नाड़ीतंत्र एवं रक्त पर इसके जप का प्रभाव पड़ता है। इसके जप से आरोग्य बढ़ता है तथा पापनाशिनी ऊर्जा भी बनती है। ओंकार के जप से आत्मबल, मनोबल व बुद्धिबल का विकास होता है। इसे जितना प्रीतिपूर्वक जपते जायेंगे उतना ही भगवद्रस बढ़ेगा।

साधक को साकार भगवान के दर्शन करने हों या निराकार के, लौकिक सिद्धि चाहिए हो या पारलौकिक, ओंकार के जप और ध्यान से सब कुछ उपलब्ध हो सकता है।

'मांडूक्योपनिषद्' में आता है :

ओमित्येतदक्षरमिदं सर्वं तस्योपव्याख्यानं भूतं भवद्भविष्यदिति सर्वमोंकार एवम्। यच्चान्यत् त्रिकालातीत तदप्योंकार एवम् ॥

भूत, वर्तमान और भविष्यकाल तथा इन तीनों से परे भी सब कुछ ओंकार ही है।

देश-काल से परे (मितीहीन) होने पर ही नश्वरता नष्ट होती है। केवल मितीहीन ही नहीं, जिसे कोई भी विभक्ति, वचन, लिंग, लागू नहीं पड़ता ऐसा अव्यय (अबदल, नष्ट न होनेवाला पद) भी ओंकार ही है।

सदृशं त्रिषु लिंगेषु सर्वासु च विभक्तिषु।
वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्ययेति तदव्ययम् ॥

'हरि' शब्द के साथ 'ॐ' मिलाकर (अर्थात् 'हरि ॐ' का) उच्चारण करने से पाँचों ज्ञानेन्द्रियों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है और उनमें सात्त्विकता का संचार होता है। 'हरि ॐ' का केवल ७ बार गुंजन करने से मूलाधार केन्द्र में स्पंदन होता है एवं कई रोगों के कीटाणु भाग खड़े होते हैं।

गृहस्थ एवं महिलाओं को केवल ओंकार का उच्चारण अधिक नहीं करना चाहिए, अपितु हरि, राम, कृष्ण या अन्य इच्छित भगवन्नाम-मिश्रित ओंकार का उच्चारण करना चाहिए।

ओंकार की महिमा जितनी गायी जाय, कम ही है। ओंकार की साधना-उपासना, चिंतन-मनन और जप, सब कुछ कल्याणकारी है। इसका ध्यान करने से बुद्धि शुद्ध रहती है, दुःखों का निवारण होता है। 'ॐ' मन को शुद्ध रखता है। 'ॐ' का जप करने से लौकिक कामनाओं की पूर्ति, देवदर्शन तथा आध्यात्मिक चेतना एवं ब्रह्म की प्राप्ति होती है। इसकी साधना साधक को ऊर्जा, क्षमता और दिव्यता प्रदान करती है। भौतिक और आध्यात्मिक उत्थान के लिए यह एक श्रेष्ठ व सरल साधना है। जो व्यक्ति भगवान और भगवद्भक्तों में प्रीति रखता है व नीच कर्मों का त्याग करता है उसे शीघ्र लाभ होता है।

श्रद्धां प्रातर्हवामहे श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धांपयेह नः ॥

'हम प्रातःकाल श्रद्धा का आवाहन करते हैं। हम मध्य दिन में श्रद्धा का आवाहन करते हैं। हम प्रेरणादायी आदित्य के अस्तमन-काल में भी श्रद्धा का आवाहन करते हैं।

हे श्रद्धे! हम लोगों को अपने इष्ट की प्राप्ति के साधन में श्रद्धावान बनाओ।'

(ऋग्वेद)

सोलहवें अध्याय का माहात्म्य

श्रीमहादेवजी कहते हैं : पार्वती ! गुजरात में सौराष्ट्र नामक एक नगर है। वहाँ खड्गबाहु नाम के राजा राज्य करते थे, जो दूसरे इंद्र के समान प्रतापी थे। उनका एक हाथी था, जो मद बहाया करता और सदा मद से उन्मत्त रहता था। उस हाथी का नाम अरिमर्दन था।

एक दिन रात में वह हठात् साँकलों और लोहे के खंभों को तोड़-फोड़कर बाहर निकल आया। हाथीवान उसके दोनों ओर अंकुश लेकर उसे डरा रहे थे, किंतु क्रोधवश उन सबकी अवहेलना करके उसने अपने रहने के स्थान- हथसार को गिरा दिया। उस पर चारों ओर से भालों की मार पड़ रही थी फिर भी हाथीवान ही डरे हुए थे, हाथी को तनिक भी भय नहीं हो रहा था। इस कौतूहलपूर्ण घटना का वृत्तांत सुनकर राजा स्वयं हाथी को मनाने की कला में निपुण राजकुमारों के साथ वहाँ आये। आकर उन्होंने उस बलवान दँतुले हाथी को देखा। नगरवासी अन्य कामधंधों की चिंता छोड़ अपने बालकों को भय से बचाते हुए बहुत दूर खड़े होकर उस महाभयंकर गजराज को देख रहे थे। उसी समय कोई ब्राह्मण तालाब से नहाकर उसी मार्ग से लौटे, जहाँ हाथी खड़ा था। वे गीता के सोलहवें अध्याय के **'अभयम्'** आदि कुछ श्लोकों का जप कर रहे थे। पुरवासियों और महावतों ने उन्हें उधर से जाने के लिए बहुत मना किया, किंतु उन्होंने किसीकी न मानी। उन्हें हाथी से भय नहीं था, इसलिए वे विचलित नहीं हुए। उधर हाथी अपनी चिंघाड़ से चारों दिशाओं को गुंजाता हुआ लोगों को कुचल रहा था। वे ब्राह्मण उसके बहते हुए मद को हाथ से छूकर कुशलतापूर्वक निकल गये। इससे राजा तथा देखनेवाले पुरवासियों के मन में इतना विस्मय हुआ कि उसका वर्णन नहीं हो सकता। राजा के कमलनेत्र चकित हो उठे। उन्होंने ब्राह्मण को बुलाकर सवारी से उतर उन्हें प्रणाम किया और पूछा : ''ब्रह्मन् ! आज आपने यह महान अलौकिक कार्य किया है, क्योंकि इस काल के समान भयंकर गजराज के सामने से आप सकुशल लौट आये हैं। प्रभो ! आप किस देवता का पूजन तथा किस मंत्र का जप करते हैं ? बताइये, आपने कौन-सी सिद्धि प्राप्त की है ?''

ब्राह्मण ने कहा : ''राजन् ! मैं प्रतिदिन गीता के सोलहवें अध्याय के कुछ श्लोकों का जप करता हूँ, इसीसे ये सारी सिद्धियाँ प्राप्त हुई हैं।''

तब हाथी का कौतूहल देखने की इच्छा छोड़कर राजा ब्राह्मणदेवता को साथ ले अपने महल में आये। वहाँ शुभ मुहूर्त देखकर उन्होंने ब्राह्मण से गीता-मंत्र की दीक्षा ली और एक लाख सुवर्णमुद्राओं की दक्षिणा दे उन्हें संतुष्ट किया। गीता के सोलहवें अध्याय के **'अभयम्'** आदि कुछ श्लोकों का अभ्यास कर लेने के बाद उनके मन में हाथी को खुला छोड़कर उसके कौतुक देखने की इच्छा जागृत हुई; फिर तो एक दिन सैनिकों के साथ बाहर निकलकर राजा ने हाथीवानों से उसी मत्त गजराज का बंधन खुलवाया। वे निर्भय हो गये। उनका सुख-विलास के प्रति आदरभाव नहीं रहा। वे अपना जीवन तृणवत् समझकर हाथी के सामने चले गये। साहसी मनुष्यों में अग्रगण्य राजा खड्गबाहु मंत्र पर विश्वास करके हाथी के समीप गये और मद की अनवरत धारा बहाते हुए उसके गंडस्थल को हाथ से छूकर सकुशल लौट आये। काल के मुख से धार्मिक और खल के मुख से साधुपुरुष की भाँति राजा उस गजराज के मुख से बचकर निकल आये। नगर में आने पर उन्होंने अपने राजकुमार को राजसिंहासन पर अभिषिक्त कर दिया तथा स्वयं गीता के सोलहवें अध्याय का पाठ करके परम गति प्राप्त की। ***('पद्म पुराण' से)***

गीता के १६वें अध्याय के कुछ श्लोक

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥
अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता ।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥

भय का सर्वथा अभाव, अंतःकरण की पूर्ण निर्मलता, तत्त्वज्ञान के लिए ध्यानयोग में निरंतर दृढ़ स्थिति और सात्त्विक दान, इन्द्रियों का दमन, भगवान, देवता और गुरुजनों की पूजा तथा अग्निहोत्र आदि उत्तम कर्मों का आचरण और वेद-शास्त्रों का पठन-पाठन तथा भगवान के नाम और गुणों का कीर्तन, स्वधर्मपालन के लिए कष्टसहन और शरीर तथा इन्द्रियों के सहित अंतःकरण की सरलता। मन, वाणी और शरीर से किसी प्रकार भी किसीको कष्ट न देना, यथार्थ और प्रिय भाषण, अपना अपकार करनेवाले पर भी क्रोध का न होना, कर्मों में कर्तापन के अभिमान का त्याग, अंतःकरण की उपरति अर्थात् चित्त की चंचलता का अभाव, किसीकी भी निंदादि न करना, सब भूतप्राणियों में हेतुरहित दया, इन्द्रियों का विषयों के साथ संयोग होने पर भी उनमें आसक्ति का न होना, कोमलता, लोक और शास्त्र से विरुद्ध आचरण में लज्जा और व्यर्थ चेष्टाओं का अभाव। तेज, क्षमा, धैर्य, बाहर की शुद्धि तथा किसीमें भी शत्रुभाव का न होना और अपने में पूज्यता के अभिमान का अभाव - ये सब तो हे अर्जुन! दैवी सम्पदा को लेकर उत्पन्न हुए पुरुष के लक्षण हैं। (१,२,३)

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥

काम, क्रोध तथा लोभ - ये तीन प्रकार के नरक के द्वार आत्मा का नाश करनेवाले अर्थात् उसको अधोगति में ले जानेवाले हैं। अतएव इन तीनों को त्याग देना चाहिए। (२१)

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ॥

जो पुरुष शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है, वह न सिद्धि को प्राप्त होता है, न परम गति को और न सुख को ही। (२३)

स्वाभाविक कर्म और नवीन कर्म

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

कर्म दो प्रकार के होते हैं : स्वाभाविक कर्म और नवीन कर्म। स्वाभाविक कर्म स्वाभाविक ही होते रहते हैं जबकि नवीन कर्म किये जाते हैं।

जैसे - छींक आना स्वाभाविक कर्म है। शरीर का पैदा होना, बड़ा होना, बीमार होना, बूढ़ा होना, मर जाना, भूख लगना, नींद आना - ये परिवर्तन स्वाभाविक होते रहते हैं, इन्हें कोई रोक नहीं सकता। पशु-पक्षी, देवता, गंधर्व, किन्नर आदि सबमें ये परिवर्तन होते रहते हैं।

दूसरे होते हैं नवीन कर्म। जैसे - अपना जन्म तो स्वाभाविक हुआ लेकिन माँ ने अच्छी शिक्षा दी, अच्छे संस्कार दिये अथवा उसमें लापरवाही की और बुरे संस्कार दिये तो ये नवीन कर्म हो गये।

नये कर्मों में शुभ करना या अशुभ करना, अच्छा करना या बुरा करना - इसमें मनुष्य स्वतंत्र है, दूसरे प्राणी नहीं। पेड़ वहीं-का-वहीं पड़ा रहेगा, पशु वैसे-का-वैसा जीयेगा। उनमें भी कोई-कोई नया कर्म कर लेता है, जैसे - बंदर साइकिल चला देता है अथवा शेर कुर्सी पर बैठ जाता है... उन्हें वैसा प्रशिक्षण देते हैं सर्कस में। लेकिन उनमें अपनी तरफ से नये कर्म करने की योग्यता नहीं है।

मनुष्य में अपनी तरफ से नये कर्म करने की योग्यता है। वह नये कर्म करके इतना तुच्छ हो सकता है कि मनुष्यता से गिरकर एकदम नीच योनियों में चला जाय या फिर इतना महान बन सकता है कि भगवान के लिए भी आदरणीय हो जाय!

उधो ! मोहे संत सदा अति प्यारे ।
मैं संतन के पीछे जाऊँ, जहाँ जहाँ संत सिधारे ।
चरणन रज निज अंग लगाऊँ, शोधूँ गात हमारे ॥

भगवान श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर के यज्ञ में संतों की जूठी पत्तलें उठायी थीं और भगवान श्रीराम वशिष्ठजी के आश्रम में सेवा करते थे, उनकी चरणचंपी करते थे। ...तो वशिष्ठजी भगवान श्रीराम के आदरणीय हो गये। महर्षि सांदीपनि और दूसरे कई संत भगवान श्रीकृष्ण के लिए आदरणीय हो गये।

सात्त्विक नवीन कर्म करनेवाले व्यक्ति मरने के बाद ऊँचे लोकों में जाते हैं - **ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था।** राजसी नवीन कर्म करनेवाले व्यक्ति फिर से मनुष्यलोक में आते हैं - **मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।** तामसी नवीन कर्म करनेवाले व्यक्ति अधोगति को प्राप्त होते हैं - **अधो गच्छन्ति तामसाः।**

स्वाभाविक कर्मों में आप दुःखी न होने में स्वतंत्र हैं। जैसे - आँधी, तूफान या भूकंप आया, गर्मी आयी, अतिवृष्टि या अनावृष्टि हुई... ये कर्म प्रकृति में स्वाभाविक होते रहते हैं। ऐसे समय में आप 'हाय-हाय' करके छाती कूटो या 'ये स्वाभाविक कर्म हैं' - ऐसा समझकर उनमें से अपना रास्ता निकालो, यह आपके हाथ की बात है।

समझो, आपके यहाँ अकाल पड़ा तो उसकी चपेट से बचने के लिए उपाय करना या फिर 'हाय रे, कर्म का लेख कैसा है... !' कहके रोना, यह आपके हाथ की बात है। अथवा तो 'अकाल पड़ा, लोग हैरान हो रहे हैं... अच्छा हुआ।' - ऐसा सोचकर दैत्य की नाईं अपने मन में खुशी मनाना, अपने हृदय को अपवित्र करना, यह भी आपके हाथ की बात है। अकाल न पड़े, सब अच्छा हो जाय इसलिए आप कीर्तन करो, भजन करो, जप करो, यज्ञ करो, भगवत्प्रार्थना करो, उत्तम नवीन कर्म करो। इसमें आपकी भी उन्नति है और लोगों के लिए भी अच्छा है।

नवीन कर्म करने में हम स्वतंत्र हैं और स्वाभाविक कर्म प्रकृति में होते रहते हैं। जैसे माँ पालन-पोषण करती है, रक्षण करती है ये नवीन कर्म हुए लेकिन बालक बढ़ता है यह स्वाभाविक कर्म है। माँ बच्चे को बड़ा नहीं कर सकती लेकिन उसका भरण-पोषण कर सकती है। उसे अच्छी पुस्तकें दे, अच्छी कहानियाँ सुनाये, नेक इन्सान बनाये अथवा फिर बुरे संस्कार दे - इस तरह माँ नवीन कर्म चाहे अच्छे करे, राजसी करे या तामसी करे लेकिन बच्चे का बढ़ना यह स्वाभाविक कर्म है।

भोजन करना यह नवीन कर्म है लेकिन अन्न पचना यह स्वाभाविक कर्म है। आप भोजन में नवीनता ला सकते हैं, उसे राजसी-तामसी आदि बना सकते हैं लेकिन पचाना यह प्रकृति का स्वाभाविक कर्म है। स्वास्थ्य के लिए दवा लेना या उपवास करना यह नवीन कर्म है, लेकिन रोग से राहत दिलाने में जीवनशक्ति स्वाभाविक काम करती है।

गीता में स्थितप्रज्ञ पुरुष के लक्षणों का वर्णन है। स्थितप्रज्ञ पुरुष कर्म तो करते हैं लेकिन उनमें कर्तृत्व-भाव नहीं होता। वे लोकमांगल्य के लिए कर्म करते हैं। गीता में भक्त के लक्षण दिये गये हैं :

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी ॥

भक्त सेवा करता है लेकिन मान अथवा किसी परिस्थिति की ममता नहीं रखता। वह स्वार्थरहित तथा सब भूतों में द्वेषभाव से रहित होता है। वह अहंकार नहीं करता इसलिए उसके कर्म शोभा पाते हैं। वह सेवा का बिल्ला लेकर सेवा करता है लेकिन सेवा का अहंकार नहीं करता। कोई सेवा का बिल्ला लेकर बेईमानी करता है तो वह हीन कर्म है और सेवा का बिल्ला लेकर सेवा करता है तो वह उत्तम कर्म है।

हीन कर्म भी नवीन हैं और उत्तम कर्म भी नवीन हैं। नवीन कर्म करते समय आप हीन कर्म करो या उत्तम कर्म करो यह आपकी मर्जी की बात है।

करम प्रधान बिस्व करि राखा।

यह सारा विश्व कर्मों की प्रधानता से ही चलता है। स्वर्ग में पुण्यकर्मों का फल भोगना होता है तथा नरक में पापकर्मों का फल भोगना होता है।

ज्ञानी महापुरुष का सूक्ष्म शरीर स्वर्ग में नहीं जाता क्योंकि वह स्वर्ग के लालच से कर्म नहीं करता। वह नरक में भी नहीं जाता क्योंकि वह वासना से

प्रेरित होकर पापकर्म नहीं करता। हनुमानजी ने लंका जला दी, युद्ध जैसा कर्म किया लेकिन उन्हें पाप नहीं लगा क्योंकि उन्होंने भगवत्प्रीत्यर्थ कर्म किये।

राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम ॥

(श्री रामचरितमानस, सुंदरकांड : १)

जैसे डॉक्टर शल्यक्रिया करते हैं तो मरीज के हित के लिए, ऐसे ही जो समाज के हित के लिए कर्म करते हैं उन्हें कर्मबंधन नहीं लगता। लेकिन अपने सत्कार्य के बदले में यदि यश, पद या कुर्सी की इच्छा है तो वे निष्काम कर्म नहीं सकाम कर्म हैं।

सत्कर्म देर-सवेर कर्ता को फल देते हैं। कर्ता उस फल की इच्छा न रखे तो वह जिसकी सत्ता से कर्म कर रहा है उस अंतरात्मा का संतोष उसे मिलता है, अंतरात्मा का ज्ञान पाने की पिपासा उसमें जगती है। अंतरात्मा कहीं दूर नहीं है। आपकी पत्नी आपसे दूर है, आपकी दुकान आपसे दूर है, आपका हाथ आपसे दूर है, आपकी जीभ आपसे दूर है, आपका मन आपसे दूर है, आपकी बुद्धि भी आपसे दूर है लेकिन आपका प्रभु आपसे उतना भी दूर नहीं है और आज तक मिला नहीं...

रावण ने नवीन कर्म किये, आगे बढ़ा और सोने की लंका पा ली। स्वर्ग तक पहुँचानेवाली सीढ़ियाँ भी उसे बनानी थीं। लेकिन उसके नवीन कर्म ऐसे थे कि उसके पास आनेवाले लोग दुःखी रहते थे। रामजी ने भी नवीन कर्म किये। रामजी नवीन कर्म करते थे तो स्वयं और प्रजा को सच्चिदानंद ब्रह्म में ले आते थे।

जो बाहर की संपत्ति से आगे बढ़ना चाहता है वह स्वयं एवं उसके साथी दुःख पाते हैं और जो भीतर के सद्‌गुणों से आगे बढ़ने का यत्न करता है वह स्वयं और उसके संपर्क में आनेवाले सुख एवं शांति पाते हैं। बाहर से आगे तो बढ़ो लेकिन बाहर का आगे बढ़ना आत्मसुख पाने के रास्ते आगे बढ़ने में सहायक होना चाहिए।

नवीन कर्म करने की क्षमतावाला कोई प्राणी अगर धरती पर है तो वह मनुष्य ही है। दो रोटी कमाकर अथवा धन का ढेर इकट्ठा करके या सत्ता के ऊँचे शिखर पर बैठकर खुश हुए और फिर वही जन्मे और मरे तो क्या झख मारी तुमने ?

जन्मदुःखं जरादुःखं जायदुःखं पुनः पुनः ।
अंतकाले महादुःखं तस्मात् जाग्रहि जाग्रहि ॥

स्वाभाविक कर्म में एक दिन ऐसा आयेगा कि जीवनभर जिस संपत्ति या पैसों को सँभाला, उन सबको छोड़कर आपको जाना पड़ेगा। इसलिए आप नवीन कर्म ऐसे करो कि जिसका सब कुछ है उस परमात्मा के साथ आपका नाता जुड़ जाय। आप अनाथ होकर नहीं, सनाथ होकर मरें। यह धर्म की व्यवस्था है। **यतो धर्मः ततो जयः यतो धर्मः ततो अभ्युदयः ।**

धर्मो रक्षति रक्षितः । जो धर्म की रक्षा करता है, भगवान उसे सद्‌बुद्धि देते हैं और उसकी रक्षा होती है।

*

गीता प्रश्नोत्तरी

१८१. हृषिकेश किसका नाम है ?
१८२. मानव-शरीर किन तत्त्वों से बना है ?
१८३. धर्मयुद्ध में मरनेवाले की क्या गति होती है ?
१८४. गीता के अनुसार मानवीय सम्बंध किस प्रकार का है ?
१८५. गीता के अनुसार क्या कोई आत्मा को मार सकता है ?
१८६. गीता के अनुसार भगवान किसके पक्ष में हैं ?
१८७. अर्जुन ने ''मैं युद्ध नहीं करूँगा'' - ऐसा क्यों कहा था ?
१८८. कर्मफल के त्याग से क्या तात्पर्य है ?
१८९. स्मरणशक्ति किससे नष्ट होती है ?
१९०. गीता में कितने श्लोक हैं ?
१९१. बुरे कर्म करने के बाद मनुष्य कहाँ जाता है ?

पिछले अंक के प्रश्नों के उत्तर

१७१. युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव १७२. अर्जुन ने भगवान श्रीकृष्ण को १७३. आत्मा १७४. १८ १७५. महर्षि वेदव्यासजी ने १७६. आत्मज्ञान १७७. अर्जुन को १७८. हनुमानजी का १७९. भीष्म पितामह ने १८०. देवदत्त।

❊ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❊

रक्षा से रक्षा

[रक्षाबंधन : २९ अगस्त]

रक्षाबंधन महोत्सव अर्थात् भाई-बहन के प्रेम का प्रतीक-पर्व। इस पर्व से सम्बंधित एक सुंदर ऐतिहासिक प्रसंग है :

ग्रीक सम्राट सिकंदर जब विजय हासिल करते-करते पुरु के राज्य में पहुँचा तथा पुरु, उसकी राज्य-व्यवस्था व सेना के मनोबल के बारे में अपने गुप्तचरों से सुना तो सिर खुजलाने लगा।

''पुरु का राज्य है तो छोटा-सा लेकिन राजासाहब ! इससे लोहा लेना मौत के मुँह में जाना है।'' किसी गुप्तचर ने कहा।

सिकंदर आगे-पीछे का तौल-मोल करता था। जानकार गुप्तचरों में से एक ने कहा :

''राजासाहब ! हिन्दुओं में एक ऐसा त्यौहार है कि उस दिन कोई भी औरत किसी मर्द को राखी बाँध दे तो वह मर्द उसका भाई हो जाता है। इससे उसके पति की रक्षा आराम से हो जाती है।'' सिकंदर की पत्नी यह सुन रही थी।

पुरु ने घोषणा करवा दी कि 'रक्षाबंधन के दिन नगर की कन्याएँ बिना रोक-टोक के राजमहल में आ सकती हैं एवं अपने राजा को राखी बाँध सकती हैं और शुभकामनाओं का तोहफा उन्हें ईश्वर दिलायेगा।'

पुरु 'उन्हें तोहफा दिया जायेगा... मैं दूँगा...' ऐसा नहीं कह रहा है। भारतीय संस्कृति कितनी महान है ! कर्म में ईश्वर को रख दिया, अहंकार को हटा दिया।

आज तक तो राजमहल में साधारण कन्या, साधारण महिला नहीं जा सकती थी किंतु अब तो अनुमति मिल चुकी थी। रक्षाबंधन के दिन महिलाओं की भीड़ में एक विदेशी महिला भी राजमहल में प्रवेश कर गयी। सैनिक चौकन्ने तो हुए किंतु करें क्या ? आज किसी नारी को रोकना नहीं है ऐसा उन्हें आदेश मिला था।

वह विदेशी नारी पहुँच गयी राजा के पास और धर्मवीर पुरु के दायें हाथ पर बाँध दिया धागा। बुद्धिमान पुरु ने पहचान लिया कि यह कौन है और कहा : ''आप कौन हैं मैं जान गया हूँ। आप सम्राट सिकंदर की पत्नी हैं। क्या चाहती हैं आप ?''

सिकंदर की पत्नी : ''युद्ध होगा और उसका परिणाम क्या आयेगा, पता नहीं। आपका राज्य और योद्धा भी कम नहीं हैं। मैं राखी लेकर आयी हूँ। यहाँ की संस्कृति के अनुसार नारी किसीको भाई मानकर राखी बाँधती है तो वह उसकी मनोवांछा पूरी करता है। मेरे सुहाग की आप रक्षा करना।''

सिकंदर की पत्नी एक धागा बाँधकर कितना सारा माँग रही है और यह भारत का वीर देने में कितना उदार है !

पुरु ने कहा : ''युद्ध में किसकी जीत होगी यह तो मैं नहीं कह सकता। लेकिन अगर मेरी जीत होती है तो तुम्हारे पति की सुरक्षा निश्चित है।''

फिर क्या हुआ ? पुरु व उसके बलवान योद्धा जान हथेली पर लिये आगे बढ़े जा रहे थे। पुरु के हाथी ने सिकंदर के रथ को ऐसी टक्कर मारी कि रथ टूट गया और सिकंदर नीचे गिर पड़ा।

पुरु नीचे उतरा, म्यान में से तलवार खींची। एक झटका ही तो मारना था लेकिन भारत का वह रक्षाबंधन महोत्सव... ! पुरु हाथ में तलवार लिये वहीं खड़ा रहा। सिकंदर ने करवट लेकर देखा कि 'मुझे यह मार सकता था किंतु अभी तक खड़ा है !' इतने में सिकंदर के सैनिक आये और पुरु को बंदी बना लिया।

युद्ध का शिविर लगा था। वहाँ सिकंदर के सामने पुरु को बंदी बनाकर लाया गया। सिकंदर ने राजवी अंदाज में पूछा : ''मैं आपके साथ क्या

सलूक करूँ ?''

पुरु : ''एक सम्राट दूसरे सम्राट के साथ जैसा इज्जतभरा व्यवहार करता है, वैसा ही तुम्हें मेरे साथ करना चाहिए।''

क्या मनोबल है पुरु का ! शत्रु ने बंदी बनाया था, अपनी लाचारी के कारण बंदी नहीं बना था। सिकंदर का मन बदल गया। वह उठ खड़ा हुआ और बोला : ''आइये सम्राट !'' उसने पुरु को अपने पास बिठाया। पुरु ने धर्म की रक्षा की थी, अतः धर्म ने उसकी रक्षा की। **धर्मो रक्षति रक्षितः।**

सिकंदर ने धीरे-से पुरु से पूछा : ''मैं रथ से गिर पड़ा था और आपके हाथ में तलवार थी। मेरी गर्दन उड़ाना दो सेकंड का काम था और कई मिनट आपके पास थे। लेकिन आप तलवार लिये गंभीरता से खड़े थे और फिर बंदी बनाये गये। इतने समय तक आप किस विचार में थे ? कैसे धोखा खाया आपने ?''

पुरु : ''मैंने धोखा नहीं खाया।''

सिकंदर की पत्नी से रहा नहीं गया। उसने कहा : ''मैंने इन्हें राखी बाँधी थी। इन्होंने मेरे सुहाग की रक्षा के लिए इतनी बड़ी कुर्बानी दी है।''

कैसी है भारतीय संस्कृति ! केवल एक धागे ने सिकंदर की रक्षा की !

वैसे तो रक्षाबंधन भाई-बहन का त्यौहार है। भाई-बहन के बीच प्रेमतंतु को निभाने का वचन देने का दिन है, अपने विकारों पर प्रतिबंध लगाने का दिन है व बहन के लिए अपने भाई के द्वारा संरक्षण पाने का दिन है। किंतु व्यापक अर्थ में आज का दिन शुभ संकल्प करने का दिन है, परमात्मा के सान्निध्य का अनुभव करने का दिन है, ऋषियों को प्रणाम करने का दिन है। भाई तो हमारी लौकिक संपत्ति का रक्षण करते हैं किंतु संतजन हमारे आध्यात्मिक खजाने का संरक्षण करते हैं।

उत्तम साधक बाह्य चमत्कारों से प्रभावित होकर नहीं, अपितु अपने दिल की शांति और आनंद के अनुभव से ही गुरुओं को मानते हैं। साधक को जो आध्यात्मिक संस्कारों का खजाना मिला है वह कहीं बिखर न जाय, काम-क्रोध-लोभ आदि लुटेरे कहीं उसे लूट न लें इसलिए साधक गुरुओं द्वारा उसकी रक्षा चाहता है। उस रक्षा की याद ताजा करने का दिन है रक्षाबंधन-पर्व।

ऋषिपूजन का पर्व है रक्षाबंधन। यह यज्ञोपवीत बदलने का विशेष दिवस है। यह स्व-अध्ययन व आत्मिक शुद्धि के लिए अनुष्ठान करने तथा उसे संपन्न करने का भी दिवस है। रक्षाबंधन का यह पर्व आपकी आत्मा की जागृति का पैगाम देता है।

प्रेमावतार श्रीकृष्ण

[श्रीकृष्ण जन्माष्टमी : ७ सितंबर]

प्रेमावतार श्रीकृष्ण का अवतार बाल-गोपालों से लेकर बड़े-बड़े विद्वानों तक को आनंद देनेवाला अवतार है।

वसुदेव भगवान को अपने मन में लाते हैं, देवकी अपने गर्भ में लाती हैं, यशोदा ने हाथों में लिया है किंतु नंद ने तो उन्हें अपने हृदय में धारण किया है। (गुजराती भाषा में गाया जाता है :) **नंद घेर आनंद भयो...**

पहले आप भगवान को सत्संग के द्वारा मन में लाइये। फिर ध्यान के द्वारा हृदय में लाइये। फिर प्रेम के द्वारा हाथों में लाइये और 'स्व' में स्थिति करके भगवान को आलिंगन करिये।

भगवान प्रेम के भूखे हैं तभी तो प्रेम के वशीभूत होकर गोपियों की छछियनभरी छाछ पर बिक गये !

श्रीकृष्ण जब अरिष्टासुर को मारकर लौटे तो गोपियों ने कहा :

''अरे, नंदलाल अंदर न आ पाये। घर में घुसने न पाये। हमें छूने न पाये क्योंकि यह अरिष्टासुर को मारकर आया है।''

भगवान ने कहा : ''मैंने ऐसा कौन-सा पाप किया है ? मैं अछूत कैसे हो गया ?''

''अरिष्टासुर को मारकर आये हो। भले वह असुर था लेकिन बैल के रूप में सामने आया था। साँड़ बनकर आया था, गौ का पुत्र था। अतः आपको

पाप लगा है।''

प्रेम में कैसा बल होता है ! जिनके नाम से जीवों के पाप मिटते हैं, उन श्रीकृष्ण को गोपियाँ खुलेआम मुँह पर कहती हैं : ''तुमने पाप किया है। अब तुम हमको मत छुओ।''

श्रीकृष्ण ने कहा : ''इसका कोई प्रायश्चित है ?''

''अड़सठ तीर्थों में स्नान करके आओ। बाद में बात करना।''

श्रीकृष्ण ने तीर्थयात्रा की तैयारी की तो राधाजी ने कहा : ''ठहरो देव ! मैं अपने सामर्थ्य से अड़सठ तीर्थों को यहीं बुलाती हूँ। ये गोपियाँ तो पागल हैं जो आपको तीर्थयात्रा के लिए भेज रही हैं। आपके विरह में तड़प भी रही हैं और आपको यात्रा करने भी भेज रही हैं।'' ऐसा कहकर राधाजी कुंड खोदने लगीं।

कृष्ण ने देखा कि राधा कुंड खोद रही है तो सोचा कि हम भी कुछ करें। कृष्ण ने भी एक कुंड खोदा। तीर्थों का आवाहन किया। तीर्थों का जल आया। कृष्ण नहाने गये।

गोपियों ने कहा : ''आप कोई साधुबाबा नहीं हो जो अकेले नहाओगे। राधारानी के साथ गोता मारना पड़ेगा और पहले राधाजी के कुंड में गोता मारो।''

श्रीकृष्ण ने राधारानी के साथ पहले उनके कुंड में गोता मारा, फिर उन्हें अपने कुंड में ले आये।

गोपियों ने कहा : ''एक बार से नहीं चलेगा, अड़सठ बार गोता मारना पड़ेगा।''

जो त्रिभुवन को नाच नचाते हैं उन्हें अहीर की छोरियाँ नाच नचाती हैं। अड़सठ तीर्थ के निमित्त उनसे अड़सठ बार डुबकी लगवायी। भगवत्प्रेम में कितना सामर्थ्य है !

गोपी... 'गो' माने इन्द्रियाँ। जो इन्द्रियों के द्वारा रस पीती है वह 'गोपी'। योगी लोग समाधि करके जो आत्मरस पीते हैं, वही आत्मरस गोपियाँ श्रीकृष्ण को निहारकर, उनकी बातें सुनकर, उनकी चर्चा करके इन्द्रियों के द्वारा पीती हैं।

अगर श्रीकृष्ण-अवतार नहीं होता तो मानव प्रेमरस का प्रसाद कैसे पाता ? मानव को आनंद, माधुर्य और गीता का दिव्य ज्ञान न मिलता तो मनुष्य-जाति संघर्ष, शोक और तबाही के कगार पर जा पहुँचती।

जहाँ-जहाँ यह श्रीकृष्ण-रस नहीं है, प्रेमाभक्ति का रस नहीं है वहाँ-वहाँ के मानव भारतवासियों की अपेक्षा ज्यादा खिन्न हैं, ज्यादा अशांत हैं, ज्यादा बीमार हैं। मरकर ज्यादा संख्या में प्रेतयोनि में वहीं के लोग जाते हैं, जहाँ भगवन्नाम और उसकी दीक्षा नहीं है।

प्रथम पूज्य गणेशजी

[गणेश चतुर्थी : १८ सितंबर]

उपासक चाहे शैव हों या शाक्त, वैष्णव हों या सौर्य, सबसे पहले पूजन गणपतिजी का ही करते हैं। घर का वास्तुपूजन हो, दुकान का शुभारंभ होता हो या बही की शुरुआत हो, विद्याध्ययन का प्रारंभ हो रहा हो, विवाह हो रहा हो या अन्य कोई मांगलिक कार्य हो रहा हो, सर्वप्रथम पूजन गणेशजी का ही किया जाता है।

लक्ष्मीवृद्धि की इच्छा रखनेवाले व्यापारी भी **'श्री गणेशाय नमः।'** से ही बहीखाते का आरंभ करते हैं और उपासक भी **'श्री गणेशाय नमः।'** करके ही उपासना शुरू करते हैं। योगी लोग भी जब मूलाधार केन्द्र का ध्यान करते हैं तो उसके अधिष्ठाता देव गणपतिजी का आराधन-आवाहन करते हैं।

उपनिषदों में गणेशजी की पूजा-आराधना सर्वोपरि मानी गयी है। उन्हें कारणब्रह्म (अधिष्ठान) के रूप में और पूरा जगत कार्यब्रह्म (अध्यस्त) के रूप में माना गया है। उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय के भी अधिष्ठाता देव हैं गणपतिजी।

गणेश चतुर्थी अर्थात् स्थूल, सूक्ष्म और कारण इन तीनों को सत्ता देनेवाले चैतन्यस्वरूप में विश्रांति पाकर, 'सोऽहम्' का नाद जगाकर, 'आनंदोऽहम्' का अमृतपान करके संसार-चक्र से मुक्त होने का दिवस।

भगवान सांब सदाशिव और माँ पार्वती, श्रीकृष्ण और राधाजी, श्रीराम और माता सीता, पुरुष और

प्रकृति, ईश्वर और उसकी आह्लादिनी शक्ति – इनके रहस्यों को समझने के लिए कुंडलिनी शक्ति जाग्रत करनी चाहिए। कुंडलिनी शक्ति के, मूलाधार केन्द्र के अधिष्ठाता देव गणपतिजी माने जाते हैं।

जिसकी कुंडलिनी शक्ति जाग्रत होती है उसकी नाड़ियाँ शुद्ध होती हैं, शरीर में छुपे हुए रोग दूर होते हैं, मन के विकार दूर होकर मन निर्मल होता है, बुद्धि सूक्ष्म व कुशाग्र होती है और परब्रह्म परमात्मा में प्रतिष्ठित हो जाती है।

अपनी सुषुप्त शक्तियों को जाग्रत करके तुरीयावस्था में पहुँचने का संकेत करनेवाले गणपतिजी गणों के नायक हैं। गण से क्या तात्पर्य है ? इन्द्रियाँ गण हैं। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ व पाँच कर्मेन्द्रियाँ ये बहिःकरण हैं और मन, बुद्धि, चित्त व अहंकार ये चार अंतःकरण हैं। इन सबका जो स्वामी है वही गणपति है, ज्ञानस्वरूप है।

ज्ञानस्वरूप, इन्द्रियों के स्वामी उन गणपतिजी से हम प्रार्थना करें कि 'आपकी शक्ति, आपकी ऋद्धि-सिद्धि हमें संसार में न भटकाये, अपितु तुरीयावस्था में पहुँचाये ऐसी आप कृपा करना, देव !'

विशेष : इस वर्ष गणेश चतुर्थी १८ सितंबर, शनिवार को है। चंद्रास्त का समय रात्रि ९:१६ बजे का है। 'गणेश चतुर्थी' के दिन चंद्रमा के दर्शन नहीं करने चाहिए।

भाद्रपद के शुक्लपक्ष की चतुर्थी को चंद्रदर्शन करनेवाला व्यक्ति कितना भी निर्दोष हो तो भी उसे कलंक अवश्य लगता है। इस दिन चन्द्रमा देखने से भगवान श्रीकृष्ण को भी स्यमंतक मणि चुराने का कलंक लगा था।

तृतीया या पंचमी का चाँद देख लें तो चतुर्थी का चाँद देखने से लगनेवाले कलंक का प्रभाव क्षीण हो जाता है।

यदि इस दिन गलती से चंद्रदर्शन हो जायें तो 'श्रीमद्भागवत' के दसवें स्कंध के ५६-५७वें अध्याय में दिये गये स्यमंतक मणि की चोरी के आख्यान का पठन-श्रवण करें।

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

भागवत का वास्तविक अध्ययन

भागवत के एक आचार्य ने राजा जनक से कहा : ''आप मुझसे भागवत सुनें।''

बुद्धिमान जनक ने कहा : ''आप भागवत ठीक से पढ़कर आयें।''

वह ब्राह्मण वैसे तो भागवत की परीक्षा में उत्तीर्ण हो चुका था, फिर भी पुनः एक बार भागवत पढ़कर आया। अब वह श्लोकों की बाल की खाल उतारने जैसी व्याख्या कर सकता था। उसने जनक से कहा : ''मैं भागवत की व्याख्या खूब समझकर आया हूँ।''

जनक ने सोचा कि 'अभी ये कच्चे हैं।' बुद्धिमान राजा जनक भागवत की कथा सुनने से इनकार नहीं करते, फिर भी उस पंडित से कहते हैं कि ''जरा फिर से पढ़कर आयें।''

जनक बार-बार 'फिर से पढ़के आयें' कहते रहे और वह पंडित फिर-फिर से पढ़ता रहा। ऐसा करते-करते एक बार पंडित एक श्लोक पर रुक गया जिसका तात्पर्य था :

'क्या नदियों ने नीर देना बंद कर दिया है ? क्या वृक्षों ने फल देना बंद कर दिया है, जो आप भगवद्रस को छोड़कर, भगवत्कथा सुनाकर बदले में कुछ चाहते हैं ? धर्म को धंधा बनाते हैं ? – मान का धंधा, सुविधा का धंधा, धन का धंधा...'

फिर वह ब्राह्मण नहीं लौटा। राजा जनक ने सोचा कि 'अभी तक नहीं आया !' उन्होंने जाँच करने के लिए गुप्तचर भेजे। गुप्तचरों ने उस ब्राह्मण

को ढूँढ़ निकाला और अपने साथ राजदरबार में चलने की प्रार्थना की तो उसने कहा : ''आया भी नहीं और आऊँगा भी नहीं।''

राजा जनक उस ब्राह्मण के पास गये और उसके चरणों में नतमस्तक होकर बोले : ''महाराज ! अब भागवत की कथा करें।''

वही एक श्लोक राजा को सिखाकर ब्राह्मण ने कहा : ''जाइये राजन् ! अब दुबारा मत आइयेगा।''

जनक : ''महाराज ! पहले तो आप मेरे पास आते थे।''

''तब वासना थी। वासना को पोसकर मैं अपने को कितना दुःखी बनाता था ! अब मुझे पता चला कि आप सचुमच मेरे हितैषी हैं। आपको प्रणाम हैं। आप राजा नहीं, महाराजा हैं।''

जनक : ''आप तो महाराजाओं के महाराज हैं, ब्रह्मस्वरूप हैं। आप निर्वासनिक नारायण का स्वरूप हो गये हैं, निर्वासनिक नारायण में टिक गये हैं। आप भगवत्स्वरूप हो गये हैं। मैं आपके चरणों में प्रणाम करता हूँ।''

*

भगवान के लिए ही रोयें

हरिहर बाबा से एक भक्त ने कहा :

''महाराज ! यह अभागा, पापी मन रुपये-पैसों के लिए तो रोता-पिटता है लेकिन भगवान अपना आत्मा हैं, फिर भी आज तक नहीं मिले इसके लिए रोता नहीं है। क्या करें ?''

हरिहर बाबा : ''रोना नहीं आता तो झूठमूठ में ही रो ले।''

''महाराज ! झूठमूठ में भी रोना नहीं आता है तो क्या करें ?''

महाराज दयालु थे। उन्होंने भगवान के विरह की दो बातें कहीं। विरह की बात करते-करते उन्होंने बीच में ही कहा कि ''चलो, झूठमूठ में रोओ।'' सबने झूठमूठ में रोना चालू किया तो देखते-देखते भक्तों में सच्चा भाव जग गया।

झूठा संसार सच्चा आकर्षण पैदा करके चौरासी के चक्कर में डाल देता है तो भगवान के लिए झूठमूठ में रोना सच्चा विरह पैदा करके हृदय में प्रेमाभक्ति भी जगा देता है।

अनुराग इस भावना का नाम है कि 'भगवान हमसे बड़ा स्नेह करते हैं, हम पर बड़ी भारी कृपा रखते हैं। हम उनको नहीं देखते, पर वे हमको देखते रहते हैं। हम उनको भूल जाते हैं, पर वे हमको नहीं भूलते। हमने उनसे नाता-रिश्ता तोड़ लिया है, पर उन्होंने हमसे अपना नाता-रिश्ता नहीं तोड़ा है। हम उनके प्रति कृतघ्न हैं, पर हमारे ऊपर उनके उपकारों की सीमा नहीं है। भगवान हमारी कृतघ्नता के बावजूद हमसे प्रेम करते हैं, हमको अपनी गोद में रखते हैं, हमको देखते रहते हैं, हमारा पालन-पोषण करते रहते हैं।' इस प्रकार की भावना ही प्रेम का मूल है। अगर तुम यह मानते हो कि 'मैं भगवान से बहुत प्रेम करता हूँ, लेकिन भगवान नहीं करते' तो तुम्हारा प्रेम खोखला है। अपने प्रेम की अपेक्षा प्रेमास्पद के प्रेम को अधिक मानने से ही प्रेम बढ़ता है। कैसे भी करके कभी प्रेम की मधुमय सरिता में गोता मारो तो कभी विरह की।

दिल के झरोखे में झुरमुट के पीछे से जो टुकुर-टुकुर देख रहे हैं दिलबर दाता, उन्हें विरह में पुकारो : ''हे नाथ... हे देव... हे रक्षक-पोषक प्रभु... टुकुर-टुकुर दिल के झरोखे से देखनेवाले देव... प्रभुदेव... ओ देव... मेरे देव... प्यारे देव...! तेरी प्रीति, तेरी भक्ति दे... हम तो तुझीसे माँगेंगे, क्या बाजार से लेंगे ? कुछ तो बोलो प्रभु... !''

कैसे भी उन्हें पुकारो। वे बड़े दयालु हैं। वे जरूर अपनी करुणा-वरुणा का एहसास करायेंगे।

तुलसी अपने राम को
रीझ भजो या खीज।
भूमि फेंके उगेंगे
उलटे सीधे बीज ॥

विरह से भजो या प्रेमाभक्ति से, जप करके भजो या ध्यान करके, उपवास, नियम-व्रत करके भजो या सेवा करके, अपने परमात्मदेव की आराधना ही सर्व मंगल, सर्व कल्याण करनेवाली है।

*

प्रेत में भगवद्दर्शन

प्रेत तीन प्रकार के होते हैं : सात्त्विक प्रेत पीपल आदि में रहते हैं, राजसिक घरों में रहते हैं और तामसिक जहाँ मरते हैं वहीं भटकते रहते हैं।

कोई मासिक धर्मवाली महिला अथवा जो अशुद्ध जीवन जीते हैं वे यदि जहाँ प्रेत रहते हों वहाँ से गुजरते हैं और प्रेत उन्हें बुलाते हैं कि 'आ जाओ' और वे जाते हैं तो प्रेत उनमें घुस जाते हैं।

एक बार रात्रि के साढ़े आठ बजे हम गुजरात के विरमगाम के पास मांडल की सन्नाटेभरी सड़क से जा रहे थे। तब हमें एक युवक प्रेत दिखा। गाँव के लोगों ने बाद में बताया कि 'पहले कोई युवक यहाँ दुर्घटना में मर गया था, वही प्रेतरूप में भटकता है।'

एक बार नामदेवजी कहीं जा रहे थे। किसी प्रेत ने सोचा कि 'चलो, इनको डराया जाय। यदि ये डर गये तो इनमें घुस जाऊँगा।'

नामदेवजी जानते थे कि परमात्मा सबमें हैं। लम्बे-लम्बे प्रेत को देखकर उन्होंने कहा :

धरती पर चरण आकाश लो माथ।
योजन भरके लम्बे हाथ।
भले पधारो लम्बकनाथ॥
सुर सनकादि यश तुम्हरो गावें।
नामदेव को करो सनाथ।
भले पधारो लम्बकनाथ॥

इस प्रकार दृढ़ भाव से परमात्मा की प्रार्थना की तो प्रेत की गहराई में स्थित परमात्मा ने देखा कि नामदेव ने तो मुझे यहाँ भी देख लिया। वे चतुर्भुज होकर प्रेत में ही प्रकट हो गये। प्रेत का भी कल्याण हो गया और नामदेवजी को भी भगवान के दर्शन हो गये। कैसी है प्रेमाभक्ति ! कैसा है भक्तों का मंगल भाव ! वे प्रेत में भगवान को देख सकते हैं तो हम संतों में, सज्जनों में तो भगवान को देखें।

*

अपने-आप पर ही फिदा !

एक राजा का एक खूबसूरत लड़का था। राजा नृत्य का बड़ा शौकीन था। एक बार उसने अपने लड़के को एक सुंदरी के वेश में सजवाया और उसका चित्र निकलवाया। दो-पाँच साल बीत गये।

राजा ने मरते समय उस चित्र को एक पेटी में डालकर उस पर ताला लगाया तथा ऊपर राजकीय मुहर मार दी और कहा कि ''इस पेटी को कोई न खोले। मेरी आज्ञा का पालन होता रहे।''

पिता की जगह पर वह राजकुमार राजा बन गया। 'पेटी कोई न खोले' यह सुनकर उसे वह पेटी खोलने की इच्छा हुई। मंत्री ने कहा : ''आपके पिता ने मना किया था। हमको आज्ञा नहीं है।'' मंत्री के मना करने से लड़के को बड़ा दुःख हुआ। उसने कहा : ''मैं भी तो राजा हूँ। मेरी भी तो आज्ञा चलेगी।''

मंत्री ने कहा : ''आपकी आज्ञा मानता हूँ तो आपके पिता की आज्ञा का उल्लंघन होता है और उनकी आज्ञा मानता हूँ तो आपकी आज्ञा का उल्लंघन होता है।''

राजा को चिंतित देखकर आखिर मंत्री ने उसे चाबी दे दी। चाबी लेकर पेटी खोली तो राजा ने क्या देखा कि एक बहुत ही सुंदर लड़की का चित्र ! उसने सोचा : 'शादी करूँगा तो इसीसे करूँगा। कहाँ मिलेगी यह ?'

राजा ने मंत्री से कहा कि ''जितना इनाम चाहिए ले लो किंतु इस लड़की को ढूँढ़कर ला दो।''

अब उस सुंदरी को कहाँ से लाया जाय ? उस चित्र की कई प्रतियाँ निकाली गयीं और पूरे नगर में घुमायी गयीं कि 'यह लड़की मिल जाय तो राजा उसके साथ शादी करना चाहते हैं।' किंतु चित्र में लड़की के रूप में राजा खुद ही तो था तो लड़की मिलती कहाँ से ?

राजा के आदमी चारों तरफ ढूँढ़कर थक गये। आखिर ढिंढोरा पिटवाया गया कि 'राजासाहब इस लड़की से शादी करना चाहते हैं। यह चित्र जिस

युवती का हो वह राजदरबार में हाजिर हो जाय तो उसको रानीसाहिबा का पद मिलेगा । राजासाहब बड़े चिंतित हैं ।'

भूतपूर्व राजा के एक पुराने मित्र, जिसने राजकुमार के शृंगार का सामान दिया था, उसने भी यह ढिंढ़ोरा सुना और चित्र देखा । चित्र देखकर उसने सोचा कि 'राजा के पिता ने तो अपने राजकुमार का ही चित्र निकलवाया था और पेटी में रखवाया था । यह वेशभूषा तो मेरे ही पास से मँगवायी थी । राजा जिससे शादी करना चाहता है, जिस पर फिदा हो रहा है वह तो वह स्वयं है किंतु उसे पता नहीं है ।'

वह वृद्ध वही वेशभूषा एवं शृंगार का सामान लेकर राजदरबार में पहुँचा और राजा से बोला :

''इस लड़की को मैं जानता हूँ ।''

राजा : ''यह मिलेगी ?''

''बिल्कुल मिलेगी ।''

''कब मिलेगी ?''

''अभी मिलेगी ।''

''किधर है ?''

''यहीं है, अभी मिलाता हूँ किंतु एक शर्त है कि पहले आप अपने ये कपड़े उतारें और जो कपड़े मैं दूँ वे पहनें ।''

''आप तो मेरे पिता के समान हैं । आप जो बोलें मैं करने के लिए तैयार हूँ ।''

वृद्ध ने अपने साथ लाये हुए कपड़े राजा को पहनाये, थोड़ा शृंगार किया और आईना दिखाया ।

राजा ने कहा : ''अरे, यह तो मैं ही हूँ ! मुझे अभी पता चला ।''

''आप ही तो हो । आपका ही सौंदर्य इस चित्र में है ।''

आप भी यदि अपने हृदय को जप से, सुमिरन से, सत्कर्म से, दान से, ज्ञान से, ध्यान से, सत्संग से सजा लो तो अपने स्वरूप का दीदार कर सकते हो ।

ऐ तालिबे मंजिल ! तू मंजिल किधर देखता है ?
दिल ही तेरी मंजिल है, तू अपने दिल की ओर देख ॥

*

एकादशी माहात्म्य

[पुत्रदा एकादशी : २६ अगस्त]

युधिष्ठिर ने पूछा : मधुसूदन ! श्रावण के शुक्लपक्ष में किस नाम की एकादशी होती है ? कृपया मेरे सामने उसका वर्णन कीजिये ।

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! प्राचीन काल की बात है । द्वापर युग के प्रारम्भ का समय था । माहिष्मतीपुर में राजा महीजित अपने राज्य का पालन करते थे किंतु उन्हें कोई पुत्र नहीं था, इसलिए वह राज्य उन्हें सुखदायक नहीं प्रतीत होता था । अपनी अवस्था अधिक देख राजा को बड़ी चिंता हुई । उन्होंने प्रजावर्ग में बैठकर इस प्रकार कहा :

''प्रजाजनो ! इस जन्म में मुझसे कोई पातक नहीं हुआ है । मैंने अपने खजाने में अन्याय से कमाया हुआ धन नहीं जमा किया है । ब्राह्मणों और देवताओं का धन भी मैंने कभी नहीं लिया है । पुत्रवत् प्रजा का पालन किया है । धर्म से पृथ्वी पर अधिकार जमाया है । दुष्टों को, चाहे वे बंधु और पुत्रों के समान ही क्यों न रहे हों, दंड दिया है । शिष्ट पुरुषों का सदा सम्मान किया है और किसीको द्वेष का पात्र नहीं समझा है । फिर क्या कारण है, जो मेरे घर में आज तक पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ ? आप लोग इसका विचार करें ।''

राजा के ये वचन सुनकर प्रजा और पुरोहितों के साथ ब्राह्मणों ने उनके हित का विचार करके गहन वन में प्रवेश किया । राजा का कल्याण चाहनेवाले वे सभी लोग इधर-उधर घूमकर ऋषिसेवित आश्रमों की तलाश करने लगे । इतने में उन्हें मुनिश्रेष्ठ लोमशजी के दर्शन हुए ।

लोमशजी धर्म के तत्त्वज्ञ, सम्पूर्ण शास्त्रों के

विशिष्ट विद्वान, दीर्घायु और महात्मा हैं। उनका शरीर लोम से भरा हुआ है। वे ब्रह्माजी के समान तेजस्वी हैं। एक-एक कल्प बीतने पर उनके शरीर का एक-एक लोम विशीर्ण होता है, टूटकर गिरता है, इसीलिए उनका नाम लोमश हुआ है। वे महामुनि तीनों कालों की बातें जानते हैं।

उन्हें देखकर सब लोगों को बड़ा हर्ष हुआ। उन लोगों को अपने निकट आया देख लोमशजी ने पूछा : ''तुम सब किसलिए यहाँ आये हो ? अपने आगमन का कारण बताओ। तुम लोगों के लिए जो हितकर कार्य होगा, उसे मैं अवश्य करूँगा।''

प्रजाजनों ने कहा : ब्रह्मन् ! इस समय महीजित नामवाले जो राजा हैं, उन्हें कोई पुत्र नहीं है। हम लोग उन्हींकी प्रजा हैं, जिनका उन्होंने पुत्र की भाँति पालन किया है। उन्हें पुत्रहीन देख, उनके दुःख से दुःखी हो हम तपस्या करने का दृढ़ निश्चय करके यहाँ आये हैं। द्विजोत्तम ! राजा के भाग्य से इस समय हमें आपके दर्शन हो गये हैं। महापुरुषों के दर्शन से ही मनुष्यों के सब कार्य सिद्ध हो जाते हैं। मुने ! अब हमें उस उपाय का उपदेश कीजिये, जिससे राजा को पुत्र की प्राप्ति हो।

उनकी बात सुनकर महर्षि लोमश दो घड़ी के लिए ध्यानमग्न हो गये। तत्पश्चात् राजा के प्राचीन जन्म का वृत्तांत जानकर उन्होंने कहा : ''प्रजावृंद ! सुनो। राजा महीजित पूर्वजन्म में मनुष्यों का धन चूसनेवाला धनहीन वैश्य था। वह वैश्य गाँव-गाँव घूमकर व्यापार किया करता था। एक दिन ज्येष्ठ के शुक्लपक्ष में दशमी तिथि को, जब दोपहर का सूर्य तप रहा था, वह किसी गाँव की सीमा में एक जलाशय पर पहुँचा। पानी से भरी हुई बावली देखकर वैश्य ने वहाँ जल पीने का विचार किया। इतने में वहाँ अपने बछड़े के साथ एक गौ भी आ पहुँची। वह प्यास से व्याकुल और ताप से पीड़ित थी, अतः बावली में जाकर जल पीने लगी। वैश्य ने पानी पीती हुई गाय को हाँककर दूर हटा दिया और स्वयं पानी पीने लगा। उसी पापकर्म के कारण राजा इस समय पुत्रहीन हुए हैं। किसी जन्म के पुण्य से इन्हें निष्कंटक राज्य की प्राप्ति हुई है।''

प्रजाजनों ने कहा : मुने ! पुराणों में उल्लेख आता है कि प्रायश्चितरूप पुण्य से पाप नष्ट होते हैं, अतः ऐसे पुण्यकर्म का उपदेश कीजिये, जिससे उस पाप का नाश हो जाय।

लोमशजी बोले : प्रजाजनो ! श्रावण मास के शुक्लपक्ष में जो एकादशी होती है, वह 'पुत्रदा' के नाम से विख्यात है। वह मनोवांछित फल प्रदान करनेवाली है। तुम लोग उसीका व्रत करो।

यह सुनकर प्रजाजनों ने मुनि को नमस्कार किया और नगर में आकर विधिपूर्वक 'पुत्रदा एकादशी' के व्रत का अनुष्ठान किया। उन्होंने विधिपूर्वक जागरण भी किया और उसका निर्मल पुण्य राजा को अर्पण कर दिया। तत्पश्चात् रानी ने गर्भधारण किया और प्रसव का समय आने पर बलवान पुत्र को जन्म दिया।

इस एकादशी का माहात्म्य सुनकर मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है तथा इहलोक में सुख पाकर परलोक में स्वर्गीय गति को प्राप्त होता है।

('पद्म पुराण' से)

मंत्रजप-सम्बंधी कुछ आवश्यक बातें

* *जननाशौच (संतान-जन्म के समय लगनेवाला अशौच-सूतक) के दौरान प्रसूतिका (माता) ४० दिन तक माला लेकर जप न करे एवं पिता १० दिन तक।*
* *मरणाशौच (मृत्यु के समय लगनेवाला अशौच) में १३ दिन तक माला लेकर जप न करें।*
* *जन्म एवं मरण - दोनों ही अशौच में शुद्धि होने के पश्चात् ही माला से जप कर सकते हैं किंतु निःस्वार्थ, भगवत्प्रीत्यर्थ मानसिक जप तो प्रत्येक अवस्था में किया जा सकता है और करना ही चाहिए।*
* *रजस्वला स्त्री जब तक मासिक रजस्राव होता रहे तब तक माला से जप न करे एवं मानसिक जप भी प्रणव (ॐ) के बिना करे।*
* *जब तक मासिक स्राव जारी हो, तब तक दीक्षा भी नहीं ली जा सकती। अगर अज्ञानतावश पाँचवें-छठे दिन भी मासिक स्राव जारी रहने पर दीक्षा ले ली गयी हो अथवा संतदर्शन कर लिया हो या इसी प्रकार की और कोई गलती हो गयी हो तो उसके प्रायश्चित के लिए 'ऋषि पंचमी' (गुरु पंचमी) का व्रत करना चाहिए। इस वर्ष ऋषि पंचमी १९ सितंबर को है।*

संत रामदास

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध की एक घटना है। अमृतसर (पंजाब) से बीस कोस (करीब चौंसठ कि.मी.) की दूरी पर 'लोना चमारी' गाँव है। वहाँ एक दंपति के यहाँ एक बालक का जन्म हुआ। उनके यहाँ खूब भैंसें थीं। वह बालक प्रतिदिन चार-पाँच सेर (एक सेर = करीब नौ सौ ग्राम) दूध स्वाहा कर जाता था। चार साल की उम्र में उस लड़के में पाँच सेर दूध पचाने की ताकत थी !

यह दंपति किन्हीं संत के पास जाता था। बेटा भी उनके साथ संत के दर्शन करने जाता। टकटकी लगाकर वह संत को देखता। संत के नामजप की कमाई का तेजोमय प्रभाव उसके चित्त पर पड़ा।

एक दिन उस बालक ने अकेले में संत से पूछा : ''बाबा ! आप ऐसे महान कैसे हो गये ? सब लोग आपके चरण छूते हैं। आपको भैंसें भी नहीं चरानी पड़तीं। घर-गृहस्थी की कोई मेहनत नहीं है। सब चीजें आपके पास हाजिर हो जाती हैं। आप इतने बड़े कैसे बने ?''

बाबा ने उसके बालसुलभ प्रश्न का बालसुलभ उत्तर देते हुए कहा : ''बेटा ! मैं 'राम-राम' जपता हूँ। पहले मैंने उच्चारण करते हुए राम-राम जपा, फिर होंठों में जपा। अब हृदय में जपता हूँ और 'राम' नाम के अर्थ में शांत होता हूँ, इसीसे सब हुआ।''

बस, मिल गया मंत्र। निर्दोष नन्हे-मुन्ने ने रामनाम की रट लगा दी। गजब हो गया ! चार से सात साल की उम्र तक भैंसें चराता रहा, किंतु इस दौरान उसे रामनाम की लत लग गयी।

एक बार वह भैंसें चरा रहा था। कोई साधु आये और बोले : ''कुछ खाने-पीने को देगा, बेटा ?''

''राम-राम-राम... साधु महाराज ! मेरी भैंसों का थोड़ा ध्यान रखना। मैं अभी लाया।''

वह लड़का भागा-भागा घर पहुँचा। दोपहर का समय था। माता-पिता आराम कर रहे थे। आटा, दाल, घी, थोड़ा-सा गुड़ और थोड़ा-सा मिर्च-मसाला बाँधा पुड़िया में। लाकर बोला : ''लो महाराज !''

महाराज ने लिया और क्षणभर लड़के पर नजर डाली व बोले : ''बेटा ! तू महात्मा बनना चाहता है ? जा, तू बड़ा योगी बनेगा।''

''बाबा ! यह कैसे हो सकता है ? मेरी तो माँ है, बाप है, भैंसें हैं और फिर मेरी भैंसों को कौन चरायेगा ?'' निर्दोष हृदय बड़ा प्यारा होता है।

''अरे, बेटा ! मेरा आशीर्वाद है कि तू बड़ा योगी बनेगा।''

बस, महात्मा की निगाह और उनके हाथ से निकलनेवाले दिव्य आंदोलनों के प्रभाव से लड़के का दिल-दिमाग बदल गया। अब उसे दूसरे लड़कों के साथ बात करना अच्छा नहीं लगता था। आठ साल की उम्र में उसका यज्ञोपवीत (जनेऊ) संस्कार हो गया और उसे गुरुकुल में पढ़ने के लिए भेज दिया गया। पढ़ा हुआ पाठ उसे जल्दी याद रह जाता क्योंकि नाम जपने से उसमें सत्त्वगुण बढ़ गया था। सत्त्वगुणी को ज्ञान बढ़ाने में कोई मेहनत नहीं पड़ती, रजोगुणी-तमोगुणी को मेहनत पड़ती है। वह लड़का गुरु की कृपा का पात्र बना तथा समय पाकर न्याय और वैशेषिक इन दर्शनशास्त्रों का निपुण विद्वान हो गया।

फिर वह गुरुकुल से विदा हुआ। जो शास्त्र पढ़े थे वे पीठ पर लादे और गीता को हृदय से लगाया। वह चालीस कोस (करीब एक सौ अट्ठाईस कि.मी.) की दूरी पर स्थित अपने घर पहुँचा। घर के पास किसी बरगद के नीचे झोंपड़ी बनायी और गायत्री मंत्र का अनुष्ठान शुरू किया। एक लाख जप होने पर गैबी (अपरिचित) आवाज आयी कि 'पुत्र ! पचीस हजार मंत्रजप देवी के मंदिर में जाकर करो।'

वह घरवालों से विदा लेना चाहता था। पिता ने कहा : ''बेटा ! तेरी शादी ?''

''मेरे भाइयों की करा दो।''

माँ ने, कुटुम्बियों ने तथा पड़ोसियों ने खूब समझाया किंतु वह अपने ध्येय से न डिगा। आखिर माता-पिता ने अनुमति दे दी। वह देवी के मंदिर में जाने को निकला। साथ में उसका भतीजा भी चल पड़ा। रास्ते में उन्हें एक बाबा का दीदार हो गया। बाबा के ओजस्वी व्यक्तित्व से प्रभावित होकर वह लड़का खिंचकर उनके निकट गया और उन्हें एकटक देखने लगा। बाबा ने भी उसकी नजर से नजर मिलायी। बाबा का नाम था काठिया बाबा।

लड़के ने उनसे कहा : ''बाबा ! मुझे साधु बनना है।''

बाबा बोले : ''मुझे शिष्य बनाना है।'' मानों, वे उसीका इंतजार कर रहे थे।

हो गयी दीक्षा की तैयारी। सिर मुँड़वा दिया, काषाय (गेरुए) वस्त्र दे दिये। नाम रख दिया 'रामदास'। रामदास तो बचपन से ही राम के दास हो गये थे, अब शरीर का नाम भी रखा गया रामदास।

संसारी मनोवृत्ति के लोग कामदास अर्थात् कामनाओं के दास होते हैं। जैसी कामना होती है, वैसे ही गिड़गिड़ाते रहते हैं। जो कामना आयी उसीकी पूर्ति में तत्पर करोड़ों कामदास मिलेंगे परंतु रामदास तो कहीं-कहीं, कोई-कोई होते हैं। रसस्वरूप ईश्वर में विश्रांति पानेवाले विरले ही होते हैं।

अब तो रामदास भूल ही गये कि पचीस हजार मंत्रजप देवी के मंदिर में करना है और काठिया बाबा के निकट ही उनके आश्रम में रहने लगे। भतीजा घर में जाकर रोया कि ''वे तो काठिया बाबा के चक्कर में आ गये हैं। एकदम साधु बन गये हैं, अब यहाँ कभी नहीं आयेंगे।''

रामदास के घरवाले काठिया बाबा के पास आये और उनसे बोले : ''बाबा ! इसको दे दीजिये। यह हमारा लड़का है। इसकी माँ रो-रोकर अंधी हो जायेगी।''

किंतु रामदास टस-से-मस नहीं हुए। तब पिता ने अश्रुभरी आँखों व गद्‌गद कंठ से कहा : ''बाबा ! एक बार तो इसे अपनी माँ के दर्शन कर लेने दीजिये।''

काठिया बाबा ने कहा : ''हाँ, जब ऐसी स्थिति है तो रामदास को एक बार माता के पास जाना चाहिए। ...और पचीस हजार मंत्रजप भी तो करना है।''

रामदास को गुरु की आज्ञा मिली। वे अपने गाँव गये किंतु गाँव के बाहर झोंपड़ी बनायी और जप करते हुए रहने लगे। फिर गाँववालों से कहा : ''भिक्षा लेने माँ के पास आऊँगा, मगर वह रोये नहीं।'' माँ ने शर्त स्वीकार की।

बेटा साधु के वेश में माँ के सामने गया और बोला : ''भिक्षां देहि।''

क्या दृढ़ता है ! क्या वैराग्य है !

वे रोज अलग-अलग घरों से भिक्षा लेते थे। एक दिन गायत्री माता प्रकट हो गयीं और बोलीं : ''पुत्र ! मैं प्रसन्न हूँ। अब तुम्हें पचीस हजार मंत्रजप करने की चिंता नहीं करनी चाहिए। तुम्हारा सवा लाख मंत्रजप पूर्ण नहीं हुआ है इसकी भी चिंता न करो। मैं तुम पर प्रसन्न हूँ, वरदान माँग लो।''

''माँ ! अब मैं संन्यासी हो गया हूँ। कामनाओं का दास नहीं, प्रभु का दास हो गया हूँ। अब मैं आपसे क्या माँगूँ ?''

''कुछ तो माँग लो।''

''माँ ! बस, आपकी प्रीति बनी रहे, कृपा बनी रहे।''

''तथास्तु'' कहकर माँ अंतर्धान हो गयीं। जितना-जितना विद्यार्थी ऊँचा उठता है, उतनी-उतनी उसकी परीक्षा भी सूक्ष्म (कठिन) होती जाती है। एक रात्रि में रूप-लावण्य से संपन्न, वस्त्रालंकारों से सजी-धजी उनके कुटुंब की एक सुंदरी उनके पास आयी।

रामदास बोले : ''रात के समय आपका यहाँ आना अच्छा नहीं है। हम साधु हैं।''

स्त्री : ''साधु हैं तो क्या हुआ ? आखिर तो हमारे कुटुंब के ही हो। मुझे नहीं पहचाना क्या ?''

''पहचाना। लेकिन आपका भाव अच्छा नहीं लगता। यदि कोई प्रश्न पूछना हो तो दिन के समय आना। रात को साधु के पास अकेले आना स्त्री के

लिए अच्छा नहीं है।''

फिर भी उसने एक न मानी। रामदास ने उसे जरा डाँट दिया तो चली गयी।

दूसरी रात्रि में वह स्त्री फिर से आयी। दूर से ही उसे देखकर रामदास ने कहा : ''जब कहा कि रात को मत आया करो तो क्यों आयी हो ?''

सुंदरी को अपने सौंदर्य पर बड़ा गर्व था। बड़े-बड़े लोग उसके दीवाने थे। किंतु इस तेजस्वी युवक को देखकर उसने कहा : ''मैं तुम पर फिदा हो गयी हूँ। तुम्हारे बिना अब रहा नहीं जाता। मुझे एक बार अपनी बाहों में ले लो।''

रामदास ने पत्थर उठाया और दे मारा। वह भाग गयी। बाबा ने सोचा कि 'अब यहाँ पर रहना निरापद नहीं है। यह खतरे की जगह है।'

कैसे-कैसे लोग हैं धरती पर ! वाह, वाह ! कितना संयम है ! बुद्धि कितनी सूक्ष्म है ! विवेक कितना प्रगाढ़ है !

वहाँ से रामदास कहीं एकांत में चले गये किंतु जहाँ गये उस देश का राजा मर गया था। वहाँ की विधवा रानी इनकी ख्याति सुनकर इन पर फिदा हो गयी। देखो, साधना में कैसे-कैसे खतरे आते हैं !

रानी ने इनकी भक्तानी होकर सेवा की। इनकी व्यवस्था सँभाली, इनके संदेशों का प्रचार-प्रसार करवाया। किंतु रानी के मन में क्या था वह तो आप जान ही गये। वह राजनीति जानती थी। अपने मन की बात जल्दी नहीं कहनी चाहिए। सामनेवाले को विश्वास में लेकर फिर काम कराना चाहिए। यह बात रानी अच्छी तरह से जानती थी। रानी ने कहा : ''आप कितने महान हैं, कितने प्यारे हैं, सुंदर हैं !''

बाबा चौकन्ने हो गये कि अपना जाल फेंक रही है। किंतु उसकी सेवा से वे प्रसन्न थे, अतः एकाएक तो भाग नहीं सकते थे।

रानी ने कहा : ''मैं इस राज्य की रानी और आप इसके राजा ! मैं अपने समेत पूरा राज्य आपको सौंपती हूँ। आप मेरे भर्ता बनें।''

''देवी ! ऐसा न कहो।''

''नाथ ! मुझे ठुकराओ नहीं।''

''यह संभव नहीं है।''

रामदास को लगा कि इस राज्य की सीमा में रहना भी निरापद नहीं है। उस समय तो रानी को रवाना कर दिया। फिर अपना झोली-झंडा उठाया और चल पड़े। जाते-जाते उसकी याद आ रही थी कि 'थी तो बड़ी अक्लवाली, इसने अपने धर्म का प्रचार भी किया।'

कभी-कभी उन्हें लगता कि 'चलो, ऋषि-जीवन जीयें किंतु क्या पता ऋषि-जीवन हो कि फिर...? उन्होंने मंत्रजप किया। मंत्रजप ने अंदर से सद्बुद्धि को बल दिया। विवेक के सहारे उस आसक्ति को छोड़कर वह बहादुर आगे चल पड़ा।

उनके जीवन में बड़े-बड़े चमत्कार हुए। सत्यसंकल्प-सिद्धि तो मानों, उनकी दासी हो गयी।

जिसमें इन्द्रियसंयम है उसके संकल्प में बल होता है। जितना-जितना इन्द्रियसंयम अधिक, उतना-उतना दुनिया को हिलाने की शक्ति भी अधिक होती है। अगर आप दुनिया का भला करना चाहते हैं तो पहले अपनी इन्द्रियों को मन में, मन को बुद्धि में और बुद्धि को बुद्धिदाता परमात्मा में बिठा दो, बस। इससे आपका, आपके कुटुंब का तथा आपके संपर्क में आनेवालों का भी भला हो जायेगा, उन्नति हो जायेगी।

भगवान श्रीकृष्ण 'श्रीमद्भागवत' के एकादश स्कंध में उद्धवजी को संबोधित करते हुए कहते हैं कि 'जिस किसी भी मूर्ति, स्वरूप अथवा माध्यम के प्रति आराधक का आराध्य भाव हो, वह उसे सर्वश्रेष्ठ परमात्मा के रूप में पूज सकता है। क्योंकि मैं विश्वात्मा हूँ इसलिए समस्त वस्तुओं में निवास करता हूँ।'

ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरुदेव और उनसे प्राप्त मंत्र, वह ठोस आधार है, जिससे साधक सहायता तथा मार्गदर्शन प्राप्त कर सकता है। उन्हें अपने जीवन का आदर्श मान सकता है। यह वह श्रेष्ठ शरण है जिस तक शिष्य के सच्चे हृदय की पुकार पहुँच सकती है और उनका आंतरिक प्रत्युत्तर भी शिष्य तक पहुँच सकता है। उनकी पवित्र उपस्थिति का आभास भी किया जा सकता है। यह आध्यात्मिक जीवन की उच्चतर कक्षा तक पहुँचने का निरापद मार्ग है।

शरीर-शुद्धि

शौच-विज्ञान

उषःपान के बाद कुछ देर भ्रमण करके मल-विसर्जन करना चाहिए। सहजता से मलत्याग न होने पर कई लोग जोर लगाकर शौच करते हैं लेकिन ऐसा करना ठीक नहीं है। यदि कब्ज हो तो उसे दूर करने के लिए देशी उपचार करें। जैसे - रात को पानी में भिगोकर रखे मुनक्के सुबह उबालकर उसी पानी में मसल लें। बीज निकालकर मुनक्के खा लें और बचा हुआ पानी पी लें। इससे कब्ज दूर होकर विशेष स्फूर्ति आती है। रात्रि-भोजन के बाद पानी के साथ त्रिफला चूर्ण लेने पर भी कब्ज दूर होता है। साधारणतया सादा, हलका आहार लेने तथा दिनभर में पर्याप्त मात्रा में पानी पीते रहने से कब्ज मिट जाता है।

✲ सिर व कान ढँक जायें ऐसी गोल टोपी पहनकर, पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके मौनपूर्वक बैठकर मल-मूत्र का त्याग करना चाहिए। सिर व कान ढँकने से रक्त तथा वायु की गति अधोमुखी हो जाती है, जिससे मलत्याग में सहायता मिलती है और अपवित्र मल के कीटाणुओं से शरीर के उत्तम तथा पवित्र अंगों - सिर आदि की रक्षा होती है। इस समय दाँत भींचकर रखने से दाँत मजबूत बनते हैं।

✲ वैज्ञानिक दृष्टि से शौच व लघुशंका के समय बोलने, खाँसने, हाँफने आदि से मल के दूषित कीटाणु शरीर में प्रविष्ट हो जाते हैं, साथ ही मलाशय-शोधन के प्राकृतिक काम में अड़चन भी आती है, जो स्वास्थ्य के लिए परम घातक है। अतः शौच व लघुशंका के समय मौन रखना चाहिए।

✲ मल-विसर्जन करते समय बायें पैर पर दबाव रखें। इस प्रयोग से बवासीर रोग नहीं होता।

✲ पैर के पंजों के बल पेशाब करने से मधुमेह की बीमारी नहीं होती।

✲ भोजन के बाद पेशाब करने से पथरी का डर नहीं रहता।

दंतधावन

शौच के बाद नीम या बबूल की ताजी या भीगी हुई दातुन से (कभी-कभी तंबाकूरहित आयुर्वेदिक मंजन से) दाँत अच्छी तरह साफ करने चाहिए। दातुन को चीरकर उसके दो भाग करके उसीसे जीभ साफ करें व अच्छी तरह कुल्ले करके मुँह साफ कर लें। दाँतों को इस तरह साफ करें कि उन पर मैल न रहे और मुख से दुर्गंध न आये।

बेर की दातुन करने से स्वर मधुर होता है, गूलर से वाणी शुद्ध होती है, नीम से पायरिया आदि रोग नष्ट होते हैं एवं बबूल की दातुन करने से दाँतों का हिलना बंद हो जाता है। किंतु मुख पक या सूज गया हो, कानों में पीड़ा हो, नया बुखार हो, प्यास लगी हो, गला, तालू, होंठ, जीभ अथवा दाँतों में रोग हो तो दातुन नहीं करनी चाहिए, वरन् मंजन में सरसों अथवा तिल के तेल की कुछ बूँदें डालकर दाँत साफ करने चाहिए। **मंजन कभी भी तर्जनी उँगली (अँगूठे के पासवाली पहली उँगली) से न करें, वरन् दूसरी उँगली से करें। क्योंकि तर्जनी उँगली में एक प्रकार का विद्युत-प्रवाह होता है, जिसके दाँतों में प्रविष्ट होने पर उनके शीघ्र कमजोर होने की संभावना रहती है।**

हमारे दाँतों का सम्बंध स्वास्थ्य से भी है और सौंदर्य से भी। दाँत साफ, सुंदर और मजबूत बने रहें तो चेहरा सुंदर दिखायी देता है तथा शरीर भी स्वस्थ व मजबूत बना रहता है, क्योंकि हम जो कुछ भी खाते हैं उसे दाँतों से चबाते हैं और जितनी अच्छी तरह चबाते हैं उतनी ही पाचनशक्ति अच्छी रहती है। चबाने का काम मजबूत दाँत ही कर सकते हैं, आँतें नहीं कर सकतीं। इसीलिए कहा गया है : **'दाँतों का काम आँतों से नहीं लेना चाहिए।'**

८० से ९० प्रतिशत बालक विशेषकर दाँतों के रोगों से, उसमें भी दंतकृमि से पीड़ित होते हैं। बालकों के अलावा बड़े लोगों में भी दाँतों के रोग वर्तमान में विशेष रूप से देखने को मिलते हैं।

दाँतों को स्वस्थ, सुंदर और मजबूत रखने हेतु कुछ उपाय :

* दिन में २-३ बार तुलसी के ५-७ पत्ते मुँह में थोड़ी देर रखने व बाद में चबाकर खाने से दंतकृमी व पेट के कृमी नष्ट हो जाते हैं।

* अति ठंडा पानी या ठंडे पदार्थ तथा अति गरम पदार्थ या गरम पानी के सेवन से भी दाँतों के रोग होते हैं। अतः इनसे बचें।

* खूब ठंडा पानी या ठंडे पदार्थ के सेवन के तुरंत बाद गरम पानी या गरम पदार्थ का सेवन किया जाय अथवा इससे विरुद्ध क्रिया की जाय तो दाँत जल्दी गिरते हैं। अतः ऐसा न करें।

* भोजन करने एवं पेय पदार्थ लेने के बाद पानी से कुल्ले करने चाहिए। अन्न के कण दाँतों में फँसे न रह जायें इसका ध्यान रखना चाहिए। जूठे मुँह रहने से बुद्धि क्षीण होती है और दाँतों व मसूड़ों में कीटाणु जमा हो जाते हैं।

* भोजन के बाद खासकर मैदा, उड़द, पापड़ जैसे दाँतों को चिपके रहनेवाले पदार्थ खाने के बाद सेब खाने से दाँतों में अटके हुए अन्नकण निकल जाते हैं। इससे तथा तुलसी के पत्ते खाने से दातों में कीटाणु उत्पन्न होने की संभावना कम हो जाती है।

* महीने में एकाध बार रात्रि को सोने से पूर्व नमक एवं सरसों का तेल मिलाकर, उससे दाँत घिसकर, कुल्ले करके सो जाना चाहिए। ऐसा करने से वृद्धावस्था में भी दाँत मजबूत रहते हैं।

* सप्ताह में एक बार तिल के तेल से मसूड़ों की मालिश करने से लाभ होता है। तिल (सफेद अथवा काले) चबाने से भी मसूड़े मजबूत होते हैं, दाँतों की चमक बनी रहती है। **परंतु सूर्यास्त के बाद तिल नहीं खाने चाहिए।**

* हर हफ्ते तिल का तेल दाँतों पर घिसकर तिल के तेल के कुल्ले करने से भी दाँत वृद्धावस्था तक मजबूत रहते हैं। यह प्रयोग पूज्य बापूजी भी करते हैं।

* आइसक्रीम, बिस्कुट, चॉकलेट, ठंडा पानी, फ्रिज के बासी पदार्थ, चाय, कॉफी आदि के सेवन से बचने से भी दाँतों की सुरक्षा होती है। सुपारी जैसे अत्यंत कठोर पदार्थों से खास बचना चाहिए।

टूथपेस्ट का प्रयोग हानिकारक

आजकल बाजार में बिकनेवाले अधिकांश टूथपेस्टों में फ्लोराइड नामक रसायन का प्रयोग किया जाता है। यह रसायन सीसे तथा आर्सेनिक जैसा विषैला होता है। इसकी थोड़ी-सी मात्रा भी यदि पेट में पहुँच जाय तो कैंसर जैसे गंभीर रोग पैदा हो सकते हैं। अतः सावधान!

टूथपेस्ट से दाँतों की सफाई करनेवालों को विशेष सलाह देते हुए विशेषज्ञों ने कहा है कि 'लोगों को महँगे व गुणरहित टूथपेस्टों के बजाय नीम आदि के दातुनों का अधिकाधिक प्रयोग करना चाहिए।' नीम की दातुन सिर्फ दाँतों की ही नहीं, अपितु पाचनतंत्र की भी सुरक्षा करती है।

प्रातःकालीन भ्रमण

दातुन करके बाहर जाकर जीवनशक्तिदायक, शुद्ध, तरोताजगी से भरपूर प्रातःकालीन वायु का सेवन करने से स्वास्थ्य-लाभ होता है। अतः प्रातःकाल में सैर अवश्य करनी चाहिए। सुबह-सुबह ओसयुक्त घास पर नंगे पैर चलना आँखों के लिए विशेष लाभकारी है क्योंकि पैरों की निचली नसों का नेत्रज्योति से विशेष सम्बंध होता है।

*

(क्रमशः)

** 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका के सभी सेवादारों तथा सदस्यों को सूचित किया जाता है कि 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका की सदस्यता के नवीनीकरण के समय पुराना सदस्यता क्रमांक/रसीद-क्रमांक एवं सदस्यता 'पुरानी' है - ऐसा लिखना अनिवार्य है। जिसकी रसीद में ये नहीं लिखे होंगे, उस सदस्य को नया सदस्य माना जायेगा।*

** नये सदस्यों को सदस्यता के अंतर्गत वर्तमान अंक के अभाव में उसके बदले एक पूर्व प्रकाशित अंक भेजा जायेगा।*

भजन करिये, भोजन पाइये... साथ में नकद दक्षिणा

भारत की इस पुण्यभूमि का सुखद सौभाग्य है कि यहाँ पर अनेकानेक नामी-अनामी संत-महापुरुषों का प्राकट्य होता रहा है । वर्तमान में जिन महापुरुष की पुनीत पदरेणु से यह धरा पावन हो रही है, वे हैं लोकलाड़िले, आत्मारामी, श्रोत्रिय, ब्रह्मनिष्ठ संत श्री आसारामजी बापू। लाखों-करोड़ों की तादाद में जनसमुदाय पूज्य बापूजी की अध्यात्म-वारि में स्नान करके न केवल अपने तन-मन की थकान को मिटाकर शीतलता व शांति पा रहा है, वरन् अपनी बुद्धि को बुद्धिदाता की ओर लगाने में भी सफल हो रहा है । समाज के पिछड़े-से-पिछड़े वर्ग की पीड़ाओं का निर्मूलन कर उनके उत्थान के लिए पूज्य बापूजी द्वारा किये जा रहे अथक प्रयत्नों का, उनकी करुणा व परदुःखकातरता का वर्णन कर पाना असंभव है । अमदावाद (गुज.) में साबरमती नदी के तट पर २९ जनवरी १९७२ में पूज्य बापूजी द्वारा स्थापित 'मोक्ष कुटीर' आज 'संत श्री आसारामजी आश्रम' के नाम से एक महान पावन तीर्थधाम में परिणत हो गयी है । पूज्य बापूजी के कल्याणकारक मार्गदर्शन में आज आश्रम द्वारा अनेकानेक लोक-कल्याण की सत्प्रवृत्तियाँ सेवाभाव से चलायी जा रही हैं । प्राकृतिक आपदाओं में राहत कार्य, आदिवासियों और निर्धनों में अनाज, वस्त्र, प्रसाद, दक्षिणा, बर्तन आदि का वितरण तथा भंडारों, निःशुल्क चिकित्सा शिविरों, जेलों में सुधार कार्यक्रमों, पूज्यश्री के सान्निध्य में विद्यार्थी सर्वांगीण उत्थान शिविरों एवं ध्यान योग शिविरों का आयोजन, सत्साहित्य प्रकाशन, व्यसनमुक्ति अभियान, युवाधन सुरक्षा अभियान, हरिनाम संकीर्तन यात्राएँ, बाल संस्कार केन्द्र, गरीब विद्यार्थियों में निःशुल्क नोटबुकों का वितरण, आयुर्वेदिक औषधालय, चल-चिकित्सालय, अस्पतालों एवं अनाथालयों में सेवाकार्य, निःशुल्क सत्साहित्य-वितरण, राशन कार्डों द्वारा हजारों निर्धन परिवारों में अनाज-वितरण, श्मशान घाटों पर सुवाक्य-लेखन, गौशालाओं का निर्माण, गौ-पालन एवं संवर्धन, निःशुल्क छाछ-वितरण, जल-प्याऊ लगवाना, मौन मंदिर एवं साधना सदनों का निर्माण, नारी उत्थान कार्यक्रम, पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचनों का विविध टी.वी. चैनलों द्वारा प्रसारण - इन सर्व लोकहितकारी सेवाकार्यों की शृंखला में एक नवीन कड़ी के रूप में पूज्य बापूजी की पावन प्रेरणा से प्रतिवर्ष देशभर में 'सामूहिक संकीर्तन एवं जपयज्ञ' का आयोजन किया जा रहा है ।

इस योजना के अंतर्गत गरीब, बेरोजगार लोग आश्रम अथवा आश्रम की समितियों के केन्द्रों पर इकट्ठे होते हैं और अपना पंजीकरण कराते हैं ।

सामान्यतया इसका समय प्रातः ९ बजे से सायं ५ बजे तक का है । इस अवधि में भगवत्प्रार्थना, सत्संग-श्रवण, सत्साहित्य का वाचन आदि सहित प्रमुख रूप से भगवन्नाम-जप तथा संकीर्तन कराया जाता है । उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति हेतु आसन-प्राणायाम तथा देव-मानव हास्य प्रयोग कराये जाते हैं । दोपहर में एक घंटे का अवकाश होता है, जिसमें सभीको भोजन दिया जाता है । भोजन के बाद कुछ समय विश्राम करके पुनः भगवन्नाम-जप, संकीर्तन, भजन तथा भगवान का ध्यान... और शाम को घर जाते समय सभीको नकद दक्षिणा के रूप में २० से ३० रुपये दिये जाते हैं । इस योजना में सभी जाति-संप्रदायों के गरीब, बेरोजगार लोग भाग ले सकते हैं, कोई बंधन नहीं है । समाज के पिछड़े वर्ग के लोगों, बेरोजगार व्यक्तियों में इस

योजना से आशा की लहर दौड़ गयी है। बेरोजगार पुरुषों के साथ-साथ महिलाएँ एवं बच्चे भी बड़ी संख्या में इस योजना का लाभ ले रहे हैं। एक-एक परिवार के २-३ सदस्य आ जाते हैं और भोजन पाते हैं। साथ में दक्षिणा भी मिलने से उनके परिवार का निर्वाह भी सरलता से हो जाता है।

कलियुग में भगवन्नाम एवं मंत्रों की बड़ी भारी महिमा है। भगवन्नाम-जप, संकीर्तन करनेवाले गरीबों एवं बेरोजगारों का तो सब प्रकार से भला होता ही है, साथ ही वातावरण में जो अशांति, पाप और रोग के परमाणु हैं, वे भी नष्ट होते हैं एवं सात्त्विकता का संचार होता है। इस सामूहिक जप-संकीर्तन में भाग लेनेवाले निर्धन लोग स्वयं अपने मुख से इस जप-संकीर्तन के प्रभाव से उनके जीवन में घटित चमत्कारों का वर्णन करते हैं। ऐसे अनेक अनुभव हमें प्राप्त हो रहे हैं। भगवन्नाम-जप करनेवाले इन लोगों के जीवन में अनेक सकारात्मक परिवर्तन देखे जा रहे हैं। लोग शराब, सिगरेट, पान मसाला, मांसाहार जैसे व्यसनों को तिलांजलि दे रहे हैं। हजारों-लाखों रुपये खर्च करके भी जो रोग दूर नहीं हो रहे थे, ऐसे रोगों से भी वे मुक्ति पा रहे हैं। घरों में होनेवाले कलह, तनावों एवं लड़ाई-झगड़ों की जगह सुहृदता, स्नेह, सद्भाव का आविर्भाव हो रहा है, परिवारों में सुख-शांति का वास हो रहा है। कइयों के वर्षों पुराने मुकदमे सुलझ गये हैं। अनेकों की साधना व एकाग्रता में बढ़ोतरी हुई है। मन में खुशी की लहर दौड़ गयी है। अनेक गरीब बेरोजगार युवानों का कहना है कि ''इस योजना में भाग लेने से हमें बहुत आनंद आया। इस कार्यक्रम को और अधिक बढ़ाया जाय तो हमारे जैसे अनेकों युवकों का भविष्य अवश्य उज्ज्वल होगा।'' जपयज्ञ से लोगों का आध्यात्मिकता की ओर रुझान बढ़ा है। अनेक लोगों एवं समाजसेवी संस्थाओं ने आश्रम तथा आश्रम की समितियों से निवेदन किया है कि यह जपयज्ञ निरंतर चलता रहे। पूज्य बापूजी द्वारा बहायी जा रही समाज-कल्याण की यह अनोखी पावन धारा सतत बहती रहे।

*

तीन गुणों का प्रभाव

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

मनुष्य का स्वभाव तीन प्रकार का होता है : सात्त्विक, राजसिक और तामसिक। जैसा संग मिलता है वैसा ही स्वभाव पुष्ट होता जाता है।

जो आया सो खा-पी लिया, जो आया सो बोल दिया, जो आया सो कर लिया... कुछ सोचा नहीं तो स्वभाव तामसी बन जायेगा। जिसका स्वभाव तामसी है उसमें आलस्य, प्रमाद, निंदा, कलह, झूठ-कपट आदि दुर्गुण आ जाते हैं। ऐसा मनुष्य फिर कीट, पतंग, मेढ़क, छछूँदर आदि तिर्यग्योनियों में जाता है।

जिसे अच्छा खाना-पीना, अच्छा पहनना आदि चाहिए, उसका स्वभाव राजसी बन जायेगा। राजसी स्वभाव में काम-क्रोध-लोभ होता है। जिसका स्वभाव राजसी होता है वह पाप से बचने का यत्न करता है। फिर भी गलती हो जाती है तो पश्चात्ताप करता है। ऐसा मनुष्य पुनः मनुष्य-योनि को पाता है। राजसी स्वभाव में भी यदि सात्त्विक अंश ज्यादा है तो वह ऊँचे कुल में या किसी साधक-भक्त के घर जन्म लेता है और तामसी अंश ज्यादा है तो नीच कुल में या शराबी-कबाबी के यहाँ जन्म लेता है।

जो सादगी, संयम और पवित्रता से रहता है, सात्त्विक आहार करता है, सत्य बोलता है, परोपकार, सेवा एवं जप-ध्यानादि करता है वह सात्त्विक स्वभाव का होता है। ऐसा मनुष्य देवलोक में दिव्य भोग भोगकर बाद में किसी पवित्र कुल में अथवा किसी योगी के घर जन्म लेता है और बचपन से ही उसे अच्छे संस्कार एवं वातावरण मिल जाता है तो भगवान को पाने में भी सफल हो जाता है। किंतु जो सात्त्विक

य के हैं और स्वर्ग नहीं चाहते, ईश्वर को ही चाहते हैं, मुक्ति ही चाहते हैं तो वे सोचते हैं कि 'मुक्ति कैसे मिले ? ईश्वर कैसे मिले ?'

जैसा मन में आये वैसा करने लगोगे तो तिर्यग्योनि में जाओगे। कुछ अच्छा करो, संयत रहो तो ऊपर की योनियों में जाओगे। पानी का नीचे बहना आसान है परंतु ऊपर चढ़ाने में पुरुषार्थ चाहिए। ऐसे ही झूठ-कपट में, निंदा में, गद्दारी में मन का गिरना आसान है लेकिन गद्दारी न करना, झूठ न बोलना, कपट न करना इनमें पुरुषार्थ चाहिए।

जो जीवन में ईमानदारी रखता है, परोपकार के कार्य करता है, सत्य बोलता है उसमें सात्त्विकता बढ़ती है। वह यदि श्रद्धा बढ़ाता है, भगवान की, गुरु की कृपा पचाता है तो तीनों गुणों से पार आत्मज्ञान में उसकी स्थिति हो जाती है।

भगवान और गुरु के बाहर के व्यक्तित्व में श्रद्धा रखोगे तो हो सकता है कि तुम्हारी बुद्धि रजो-तमोगुणी होने पर श्रद्धा अश्रद्धा में बदल जाय। श्रद्धा गुण देखकर होती है और अवगुण देखकर टूटती है। किंतु ईमानदारी से भगवान की तरफ चलोगे तो आपको भगवान के इतने-इतने दिव्य गुण दिखते जायेंगे कि आपकी श्रद्धा श्रद्धा नहीं रहेगी, प्रेम में बदल जायेगी और प्रेम कभी बदलता नहीं।

तमोगुण से रजोगुण अच्छा है और रजोगुण से सत्त्वगुण बढ़िया है। तमोगुण अकेला नहीं रहता, उसमें रजोगुण और सत्त्वगुण मिश्रित रहते हैं। रजोगुण भी अकेला नहीं रहता, उसमें सत्त्वगुण और तमोगुण रहते हैं। सत्त्वगुण भी अकेला नहीं रहता, उसमें रजोगुण और तमोगुण रहते हैं किंतु सबकी मात्रा अलग-अलग होती है। इस प्रकार बुद्धि में ये तीनों गुण मिश्रित रूप में रहते हैं।

सत्त्वगुणी में भी तमोगुण रहता ही है। यदि तमोगुण नहीं होगा तो नींद कैसे आयेगी ? नींद तमस् से ही आती है। नियम से आसन, प्राणायाम, जप, ध्यान आदि करने से मनुष्य में सत्त्वगुण की वृद्धि होती है, जिससे कम नींद लेने पर भी थकान नहीं बल्कि स्फूर्ति रहती है।

मनुष्य तीनों गुणों का मिश्रण है। यदि सत्त्वगुण ज्यादा है तो मनुष्य सात्विक स्वभाववाला, रजोगुण ज्यादा है तो राजसी स्वभाववाला और तमोगुण ज्यादा है तो तामसी स्वभाववाला होता है।

तीन गुणों की साम्यावस्था प्रकृति है। तीन गुण प्रकृति के हैं। प्रकृति पुरुष अर्थात् परमात्मा से सत्ता लाती है। जैसे आप और आपकी शक्ति एक ही है, वैसे ही परमात्मा और परमात्मा की शक्ति (प्रकृति) एक ही है। जैसे मिठाई के कण-कण में मिठास व्याप्त है, ऐसे ही पूरे ब्रह्मांड में परमात्मा की चेतना व्याप्त है। जैसे दूध और दूध की सफेदी, तेल और तेल की चिकनाहट एक ही है, वैसे ही भगवान और भगवान की शक्ति एक ही है। इसीलिए भगवान को शक्तिरूप में भी मानते हैं और शिवरूप में भी।

ईश्वर तो सदा मौजूद है किंतु जैसे बादल हटने से सूरज दिख जाता है, ऐसे ही सात्त्विक आहार लेते हैं, सात्त्विक व्यवहार करते हैं, सच्चाई रखते हैं तो रजोगुण एवं तमोगुण क्षीण होने से अनायास ही परब्रह्म परमात्मा का आनंद और सामर्थ्य प्रकट होने लगता है।

महत्त्वपूर्ण निवेदन

सदस्यों के डाक-पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य १४२वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया अगस्त २००४ के अंत तक अपना नया पता भेज दें।

सेवाधारियों व सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनी ऑर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।
(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरुआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जायेगी।

सत्शिष्य के लक्षण

(गतांक का शेष)

सत्शिष्य का दूसरा लक्षण है 'निर्मत्सरता'। मत्सर (द्वेष) देहाभिमान को दृढ़ करता है। सत्शिष्य मत्सर को पूर्णतया छोड़ देता है।

मत्सररहित व्यक्ति कैसा होता है ? उसको मिलनेवाले लाभ का कोई हरण कर ले तो भी वह अपने चित्त में द्वेष उत्पन्न नहीं होने देता। प्राणिमात्र में एक भगवान ही निवास करते हैं, ऐसी भावना वह हमेशा बनाये रखता है। अतः द्वेष उसके पास आ ही नहीं सकता। दुर्जन लोग निंदा के वाग्बाणों से उसका हृदय कितना ही विद्ध कर दें तो भी वह मन में द्वेष को उत्पन्न नहीं होने देता। उनके द्वारा की गयी निंदा में वह अपना हित ही मानता है। जो भी उसकी निंदा करता है, उसको वह अपना हित करनेवाली माता ही समझता है। उसकी समझ ही ऐसी होती है कि उन निंदकों ने उसके पातकों का मल धो डाला है तथा उसकी वृत्ति को निर्मल कर दिया है। ऐसे विचारों के कारण वह अपने मन को द्वेष का स्पर्श भी नहीं होने देता। यही 'निर्मत्सरता' है।

सद्गुरु और ईश्वर एक हैं

आत्मज्ञान संपादन करने के लिए सद्गुरु की सेवा करके सज्जन लोग शांत होते हैं क्योंकि सद्गुरु आनंदघन होते हैं।

जो सदा चित्सुख से संपन्न है, चित्स्वरूप में जिसको समाधान है, वह चिन्मात्र से भिन्न कभी नहीं हो सकता। जैसे नमक समुद्र में गिरते ही तत्काल समुद्ररूप हो जाता है, दीपक अग्नि का स्पर्श करते ही अग्निरूप में विराजमान हो जाता है, उसी तरह जिसे चिद्रूप का ज्ञान होता है वह परिपूर्ण चिद्रूप ही बन जाता है। गुरु और ब्रह्म भिन्न नहीं होते। इस विषय में उपनिषद् ही प्रमाण हैं।

गुरु के श्रीचरणों में निज सुख निवास करता है। उन सद्गुरु के लक्षण बताने में शब्द ही समाप्त हो जाते हैं। जो सनातन पूर्ण ब्रह्म हैं, उनका चिह्न कोई क्या बता सकता है ? फिर भी एक चिह्न बताया जाता है, वह यह कि उनमें तथा उनके आसपास आंतरिक प्रसन्नता, माधुर्य और शांति व्याप्त हुई दिखती है।

हे उद्धव ! ऐसे सद्गुरु का प्रेम जिसके मन में होता है, जिसकी इस प्रेम-अवस्था में बढ़ोतरी होती ही रहती है, गुरुतत्त्व रूप से मैं अव्यक्त होते हुए भी उसके हृदय में आनंद रूप से, प्रेमाभक्ति रूप से व्यक्त होने लगता हूँ।

साधन-सामग्री में 'विशेष उत्कंठा' ही एक मुख्य साधन होता है। यदि (निगुरे रहकर) करोड़ों बड़े-बड़े साधन कर लिये जायें तो भी आत्मज्ञान का अंशमात्र भी हाथ नहीं लगता, लेकिन सद्गुरु (गुरुतत्त्व) के भजन में यदि आधी घड़ी भी बितायी जाय तो आत्मज्ञान का खजाना हाथ लग जाता है। सद्गुरु के भजन में लग जाने पर मोक्ष भी आकर चरण-वंदन करता है। लेकिन गुरुभक्त उसे भी स्वीकार नहीं करता, क्योंकि वह तो चरणसेवा में ही डूबा रहता है। श्रीगुरुचरणों के मधुर रस का स्वाद ऐसा होता है कि उससे अपार सुख-राशि मोक्ष का भी विस्मरण हो जाता है। जिन्हें गुरुभजन से प्रेम या लगाव नहीं होता वे ही संसार-बंधन में पड़ते हैं। संसार-बंधन तोड़ने के लिए सद्गुरु की ही सेवा करना आवश्यक होता है। सद्गुरु की सेवा ही मेरा भजन है, क्योंकि मुझमें व गुरु में कोई अंतर नहीं है। इस तरह मैंने तुम्हें बताया कि गुरुभक्त की श्रद्धा कितनी निस्सीम होती है और उसे गुरुभजन में कैसा रस आता है।

('एकनाथी भागवत' से)

*
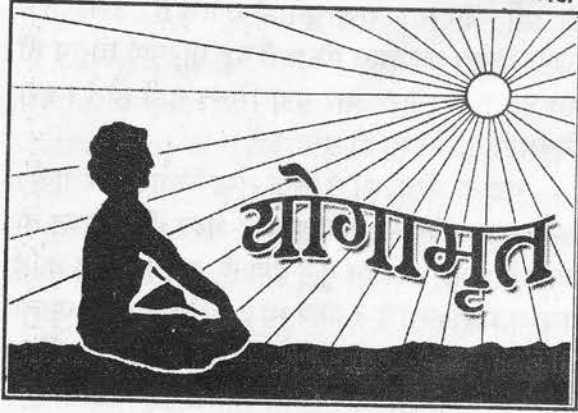
लाभदायक मुद्राएँ

आकाश मुद्रा

विधि : अँगूठे के अग्रभाग से मध्यमा उँगली के अग्रभाग को स्पर्श करें। बाकी की तीन उँगलियाँ सहज रूप से सीधी रखें।

लाभ : इस मुद्रा के नियमित अभ्यास से हड्डियों को समुचित पोषण मिलता है, वे मजबूत बनती हैं। हृदयरोगियों को भी इस मुद्रा से बहुत फायदा होता है। यह मुद्रा कान की बीमारियों को दूर करने में भी सहायक है। हिचकी या उबासी आ रही हो तब यदि यह मुद्रा की जाय तो जबड़ों में अकड़ आने की मुसीबत से बचा जा सकता है।

अवधि : इस मुद्रा का अभ्यास प्रतिदिन ५ मिनट से लेकर ४५ मिनट तक आवश्यकतानुसार कर सकते हैं।

अपान मुद्रा

विधि : अँगूठे के अग्रभाग से मध्यमा और अनामिका (छोटी उँगली के पासवाली उँगली) के अग्रभागों को स्पर्श करें। बाकी की दो उँगलियाँ सहजावस्था में सीधी रखें।

लाभ : इस मुद्रा के अभ्यास से शरीर की अंदरूनी सफाई में मदद मिलत है। आँतों में फँसे मल और विषैले पदार्थों क आसानी से बाहर निकालने में यह मुद्रा काफी असरदार है। इसके फलस्वरूप शारीरिक व मानसिक पवित्रता में वृद्धि होती है और अभ्यासकत में सात्त्विक गुणों का समावेश होने लगता है। मूत्र-उत्सर्जन में कठिनाई, वायुदोष, अम्लदोष (पित्तदोष), पेटदर्द, कब्जियत और मधुमेह जैसी बीमारियों में भी यह मुद्रा काफी लाभदायक सिद्ध हुई है। जिन्हें पसीना न आने के कारण परेशानी होती हो, वे इस मुद्रा के अभ्यास से जल्द ही उससे छुटकारा पा सकते हैं। यदि छाती और गले में कफ जम गया हो तो इस मुद्रा के अभ्यास से ऐसे उपद्रवी कफ को भी सहज ही उत्सर्जित किया जा सकता है।

इसका नियमित अभ्यास कैंसर जैसी भयानक बीमारी की भी रोकथाम करने में सहायक है।

अवधि : इस मुद्रा का अभ्यास किसी भी समय, कितनी भी अवधि के लिए कर सकते हैं, परंतु प्रतिदिन नियमित रूप से करें।

हवा और आरोग्य

हवा का प्रभाव उसकी गति व दिशा के अनुसार स्वास्थ्य तथा वातावरण आदि पर पड़ता है।

अत्यधिक खुली हवा शरीर में रुक्षता उत्पन्न करती है, वर्ण बिगाड़ती है, अंगों को शिथिल करती है, पित्त मिटाती है, पसीना दूर करती है, मूर्च्छा एवं तृषा का शमन करती है। जहाँ हवा का आवागमन न हो वह स्थान उपरोक्त गुणधर्मों से विपरीत प्रभाव डालता है।

ग्रीष्म ऋतु में इच्छानुसार खुली हवा का सेवन करें व शरद ऋतु में मध्यम हवा हो ऐसे स्थान पर रहें। आयु और आरोग्य की रक्षा हेतु जहाँ अधिक गति से हवा नहीं बहती हो ऐसे मध्यम हवायुक्त स्थान पर निवास करें। यह सदैव हितकर है।

निर्वातमायुषे सेव्यमारोग्याय च सर्वदा। (भावप्रकाश)

भिन्न-भिन्न दिशाओं से आनेवाली हवा का स्वास्थ्य पर प्रभाव

* **पूर्व दिशा की हवा :** भारी, गर्म, स्निग्ध, दाहकारक, रक्त तथा पित्त को दूषित करनेवाली होती है। परिश्रमी, कफ के रोगों से पीड़ित तथा कृश व दुर्बल लोगों के लिए हितकर है। यह हवा चर्मरोग, अर्श, कृमिरोग, मधुमेह, आमवात, संधिवात इत्यादि को बढ़ाती है।

* **दक्षिण दिशा की हवा :** खाद्य-पदार्थों में मधुरता बढ़ाती है। पित्त व रक्त के विकारों में लाभप्रद है। वीर्यवान, बलप्रद व आँखों के लिए हितकर है।

* **पश्चिम दिशा की हवा :** तीक्ष्ण, शोषक व हलकी होती है। यह कफ, पित्त, चर्बी एवं बल को घटाती है व वायु की वृद्धि करती है।

* **उत्तर दिशा की हवा :** शीत, स्निग्ध, दोषों को अत्यंत कुपित करनेवाली, ग्लानिकारक व शरीर में लचीलापन लानेवाली है। स्वस्थ मनुष्य के लिए बलप्रद व मधुर है।

* अग्नि कोण की हवा दाहकारक एवं रुक्ष है। नैऋत्य कोण की हवा रुक्ष है लेकिन जलन पैदा नहीं करती। वायव्य कोण की हवा कटु और ईशान कोण की हवा तिक्त है।

* ब्राह्ममुहूर्त (सूर्योदय से सवा दो घंटे पूर्व से लेकर सूर्योदय तक का समय) में सभी दिशाओं की हवा सब प्रकार के दोषों से रहित होती है। अतः इस वेला में वायुसेवन बहुत ही हितकर होता है। वायु की शुद्धि प्रभातकाल में तथा सूर्य की किरणों, वर्षा, वृक्षों एवं ऋतु-परिवर्तन से होती है।

* पंखे की घूमती हवा तीव्र होती है। ऐसी हवा उदानवायु को विकृत करती है और व्यानवायु की गति को रोक देती है, जिससे चक्कर आने लगते हैं तथा शरीर के जोड़ों को आक्रांत करनेवाले गठिया आदि रोग हो जाते हैं।

खस, मोर के पंखों तथा बेंत के पंखों की हवा स्निग्ध एवं हृदय को आनंद देनेवाली होती है।

* अशुद्ध स्थान की वायु का सेवन करने से पाचन-दोष, खाँसी, फेफड़ों का प्रदाह तथा दुर्बलता आदि दोष उत्पन्न हो जाते हैं। प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति अपनी नासिका की सिधाई में २१ इंच की दूरी तक की वायु ग्रहण करता है और फेंकता है। अतः इस बात को सदैव ध्यान में रखकर अशुद्ध स्थान की वायु के सेवन से बचना चाहिए।

* जो लोग अन्य किसी भी प्रकार की कोई कसरत नहीं कर सकते, उनके लिए टहलने की कसरत बहुत जरूरी है। इससे सिर से लेकर पैरों तक की करीब २०० मांसपेशियों की स्वाभाविक ही हलकी-हलकी कसरत हो जाती है। टहलते समय हृदय की धड़कन की गति १ मिनट में ७२ बार से बढ़कर ८२ बार हो जाती है और श्वास भी तेजी से चलने लगता है, जिससे अधिक ऑक्सीजन रक्त में पहुँचकर उसे साफ करता है।

टहलना कसरत की सर्वोत्तम पद्धति मानी गयी है क्योंकि कसरत की अन्य पद्धतियों की अपेक्षा टहलने से हृदय पर कम जोर पड़ता है तथा शरीर के एक-दो नहीं बल्कि सभी अंग अत्यंत सरल और स्वाभाविक तरीके से सशक्त हो जाते हैं।

आठ महादोषकारक वर्जित क्रियाएँ

उच्चैभाष्यं रथं क्षोभश्चातिचङ्क्रमणासने।
अजीर्णाहितभोज्ये च दिवास्वप्नं च मैथुनम् ॥

(चरक संहिता)

रोगी को अथवा बीमारी की शुरुआत में ही व्यक्ति को चाहिए कि सर्वप्रथम निम्नलिखित आठ बातों का त्याग करे :

(१) जोर-से बोलना (२) वाहनों की झटके भरी यात्रा (३) अत्यधिक चलना (४) अत्यधिक बैठना (५) अजीर्ण में भोजन (६) अहितकर भोजन (७) दिन में सोना और (८) मैथुन।

इन वर्जित क्रियाओं का सेवन करने से क्रमशः निम्न व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं :

जोर-से बोलने पर - गला, कान, नाक, मस्तिष्क आदि के रोग।

वाहनों की झटके भरी यात्रा से - समस्त शरीर के रोग।

अत्यधिक चलने से - शरीर के निचले हिस्से (कमर से नीचे) के अंगों के रोग।

अत्यधिक बैठने से - शरीर के मध्य भाग, पेट आदि के रोग।

अजीर्ण में भोजन करने से - आमजनित रोग।

अहितकर भोजन करने से - त्रिदोषों (वात, पित्त, कफ) के कारण उत्पन्न होनेवाले रोग।

दिन में सोने से - कफ, मेद आदि के रोग।

मैथुन से - धातुक्षयजनित विकार उत्पन्न होते हैं।

अगस्त्य, माधव, मुचकुंद, कपिल व आस्तिक - इन पाँच महापुरुषों का स्मरण करके सोने से सुखपूर्वक निद्रा आती है एवं आस्तिक मुनि के नामोच्चारण से सर्प नहीं आते।

जलपान-विषयक महत्त्वपूर्ण बातें

* शौच जाने से पूर्व पानी पीना अच्छा रहता है।
* रात को सोने से पूर्व कुल्ला करके थोड़ा-सा पानी पीयें। इससे नींद अच्छी आती है। सिर, नाक या गले के रोग से पीड़ित व्यक्ति को सोते समय अधिक पानी नहीं पीना चाहिए।
* भोजन के एक-दो घंटे बाद पानी पीना लाभदायक है क्योंकि यह पाचन के दौरान पौष्टिक तत्त्वों को नष्ट नहीं होने देता, जिससे शरीर बलवान बनता है।
* खेलकूद, व्यायाम व परिश्रम के कार्य करने से शरीर में पानी की कमी हो जाती है, अतएव परिश्रम करने से पहले तथा परिश्रम करने के उपरांत लगभग आधा घंटा विश्राम करके थोड़ा-बहुत पानी अवश्य पीना चाहिए।
* गर्मी के दिनों में पानी अधिक मात्रा में पीयें, ताकि अजीर्ण तथा पेट के रोग न हों और पेट अच्छा रहे।
* उपवास के दौरान पाचन-अंगों को भोजन पचाने का काम नहीं करना पड़ता। इस कारण वे शरीर में संचित जहर को बाहर निकालना प्रारंभ कर देते हैं। यह जहर शरीर के लिए बहुत हानिकारक होता है। इसलिए उपवास के दौरान गुनगुना पानी पीना चाहिए, जिससे शरीर में संचित जहर को बाहर निकालने में सहायता मिले।
* किसी भी प्रकार का पेय पदार्थ दायाँ नथुना (दायाँ स्वर) बंद करके पीना चाहिए। दाहिने स्वर के चलते पेय पदार्थ पीने से जीवनशक्ति का ह्रास होता है।

जलपान-निषेध कब ?

* भोजन के तुरंत बाद (विशेषकर घी, तेल, मक्खन, फल तथा समोसा, कचौरी आदि गर्म वस्तुओं अथवा अति ठंडी वस्तुओं को खाने के तत्काल बाद), अति भूख लगने पर, शौचक्रिया के तुरंत बाद, पेशाब करने के तुरंत बाद या पहले, धूप में तपकर आने के बाद, जब पसीना आ रहा हो तब तथा व्यायाम या खेलकूद के तत्काल बाद पानी नहीं पीना चाहिए, अन्यथा जुकाम आदि कई शिकायतें हो सकती हैं।

चतुर्मास में स्वास्थ्य-रक्षा

चतुर्मास रोग फैलानेवाला ऋतु माना जाता है। इसमें फैले रोगों का विस्फोट शरद ऋतु में होता है।

चतुर्मास में रोगों का फैलाव अधिक इसलिए होता है कि -

(१) चतुर्मास में आकाश बादलों से ढका रहता है, जिससे उचित मात्रा में जीवनशक्ति नहीं मिल पाती तथा हानिकारक जंतुओं का नाश नहीं होता। इससे रोगों का फैलाव होता है और जीवनशक्ति के अभाव में रोग बढ़ता ही जाता है।

(२) चतुर्मास में जगह-जगह इकट्ठे हुए पानी में सड़ाँध पैदा होने से एवं उस पर मच्छर-मक्खियाँ मँडराने से मलेरिया जैसे रोग पैदा होते हैं।

(३) जीवनशक्ति कम होने से स्वाभाविक ही उसका प्रभाव पाचनशक्ति पर पड़ता है और खानपान में असावधानी से अपचन, गैस, कॉलरा, विषमज्वर जैसे अनेक रोग हो जाते हैं। ऐसे रोगी खुले में हाजत करने बैठें तो मक्खियाँ आकर बैठती हैं, फिर वही मक्खियाँ खाद्य पदार्थों पर बैठकर रोगों का फैलाव और तेजी से करती हैं।

इन रोगों से बचने के लिए निसर्गोपचार एवं आयुर्वेद के अनुसार हमें अपनी जीवनशक्ति को बढ़ाना चाहिए।

जीवनशक्ति बढ़ाने के उपाय

(१) साधारणतया चतुर्मास में पाचनशक्ति मंद रहती है। अतः आहार कम करना चाहिए। पंद्रह दिन में एक दिन उपवास रखना न भूलें।

(२) चतुर्मास में जामुन, कश्मीरी सेब आदि फल होते हैं। उनका यथोचित सेवन करें।

(३) हरी घास पर खूब चलें। इससे घास और पैरों की नसों के बीच विशेष प्रकार का आदान-प्रदान होता है, जिससे स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

(४) गर्मियों में शरीर के सभी अवयव शरीर-शुद्धि का कार्य करते हैं, मगर चतुर्मास में शुद्धि का कार्य केवल आँतों, गुर्दों एवं फेफड़ों को ही करना होता है। इसलिए सुबह उठने पर, घूमते समय और सुबह-शाम नहाते समय गहरे श्वास लेने चाहिए। चतुर्मास में दो बार स्नान करना बहुत ही हितकर है। स्नान ठंडे पानी से ही करना चाहिए। इस ऋतु में रात्रि में लगभग १० बजे सो जाना चाहिए।

✲ दीपक, खाट या शरीर की 'छाया', केश, वस्त्र या चटाई का 'जल', बकरी, झाड़ू या बिल्ली के नीचे की 'धूलि' - ये सब शुभ प्रारब्ध को हर लेते हैं।

✲ घर में टूटी-फूटी अथवा अग्नि से जली हुई प्रतिमा की पूजा नहीं करनी चाहिए। ऐसी मूर्ति की पूजा करने से गृहस्वामी के मन में उद्वेग पैदा होता है या फिर उसका अनिष्ट होता है।

✲ सूर्य से आरोग्य की, अग्नि से श्री की, शिव से ज्ञान की, विष्णु से मोक्ष की, दुर्गा आदि से रक्षा की, भैरव आदि से कठिनाइयों से पार पाने की, सरस्वती से विद्या के तत्त्व की, लक्ष्मी से ऐश्वर्य-वृद्धि की, पार्वती से सौभाग्य की, शची से मंगल-वृद्धि की, स्कंद से संतान-वृद्धि की और गणेश से सभी वस्तुओं की याचना करनी चाहिए।

(टाइटल पृष्ठ २ का शेष)

आप पर्यावरण-सुरक्षा के इस दैवी कार्य में सहभागी होकर आपके द्वारा किये गये 'पर्यावरण-सुरक्षा कार्यक्रम' के विषय में हमें सूचित करें तो आपके सराहनीय कार्य का देश की लोकप्रिय पत्रिकाओं में प्रकाशन किया जायेगा।

'ऋषि प्रसाद' पत्रिका जो साढ़े सत्रह लाख की संख्या में प्रकाशित होती है, उसके अलावा 'लोक कल्याण सेतु' व 'दरवेश दर्शन' इन पत्र-पत्रिकाओं में भी आपके सराहनीय कार्य के प्रकाशन की हम बाट जोह रहे हैं। कृपया हमें सूचित करें कि आपके द्वारा किन-किन क्षेत्रों में कितने-कितने वृक्ष लगाये गये ? टी.वी. चैनलों व वेबसाइट द्वारा भी आपके इस सराहनीय कार्य का वर्णन करने का संस्था को अवसर प्राप्त होगा।

जाको राखे साईंयाँ...

यह घटना दिनांक ९ जून २००३ की है। मेरे पिता वासुदेव जैसाराम बालानी अपने भतीजे सनी तथा दामाद हीरानंद के साथ टू-व्हीलर (बजाज एम-८०) पर शनि शिंगणापुर (महाराष्ट्र) से घर आ रहे थे। थोड़ी बरसात हो रही थी तथा अँधेरा भी था। सामने लोहे के सरियों से भरा हुआ एक ट्रक खड़ा था। पापा को अँधेरे में वह ट्रक दिखायी नहीं दिया और उनका टू-व्हीलर ट्रक से टकरा गया। जिससे दो सरिये पापा के पेट के आर-पार हो गये। उस समय आसपास कोई नहीं था। इतने में पापा ने देखा कि बापूजी हँसते हुए नाचते-नाचते आ रहे हैं और उन्हें हाथों में लेकर खड़े हो गये। लगभग दो घंटे बाद गैस वेल्डिंग से सरिये काटे गये और पापा को दवाखाने में ले जाया गया। तब तक खून की एक बूँद भी शरीर से नहीं निकली थी। डॉक्टरों ने सरिये निकाले तथा आश्चर्यचकित होते हुए कहा : ''अंदर से कुछ बड़ी हानि नहीं हुई है। सिर्फ शौच के स्थान पर छेद हो गया था, वह भी अब ठीक है।'' यह सुनकर मैं गद्‌गद हो उठी। आज पापा पूरी तरह स्वस्थ हैं। यह मेरे सद्‌गुरुदेव की ही कृपा है कि उन्हें जीवनदान मिला।

*- सीमा बालानी, सुपुत्री वासुदेव बालानी
मकान नं.-४, पंचशील नगर, बोरुड़े माला, सावेड़ी, अहमदनगर (महा.). फोन : ०२४१-२३५६७२३.*

पूज्यश्री की कृपा से सफलता
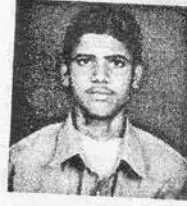
परम पूज्य बापूजी के श्रीचरणों में कोटि-कोटि प्रणाम। पूज्य बापूजी की कृपा से मुझे सितंबर ९८ में 'पुष्कर ध्यानयोग शिविर' में सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा मिली।

मैं नित्य सुबह जल्दी उठकर स्नानादि करके प्राणायाम, 'श्रीगुरुगीता' एवं 'श्रीआसारामायण' का पाठ तथा सारस्वत्य मंत्र का जप करता हूँ। जिसके फलस्वरूप तथा पूज्य गुरुदेव की असीम कृपा से मैंने १०वीं कक्षा में ९३.३३% अंक प्राप्त कर राजस्थान राज्य की बोर्ड की वरीयता सूची में ११वाँ स्थान प्राप्त किया है।

मैं प्रत्येक रविवार को सत्संग में जाता हूँ तथा 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका एवं 'बाल संस्कार' पुस्तक का पठन-मनन करता हूँ। नित्य प्राणायाम करने से मेरी एकाग्रता में वृद्धि हुई है व आत्मबल बढ़ा है। मुझे ८वीं कक्षा से स्कूल द्वारा छात्रवृत्ति प्राप्त हो रही है।

- चेतन कुमार मौर्य, ए-२२, बालनगर, करतारपुरा, जयपुर (राज.)।

परम पूज्य सद्‌गुरुदेव की कृपा से मेरे पुत्र समीर ने फरवरी २००४ में १२वीं कक्षा की बोर्ड परीक्षा में ९१.५०% अंक प्राप्त कर थाने शहर में प्रथम और महाराष्ट्र राज्य की वरीयता सूची में १५वाँ स्थान प्राप्त किया। १०वीं कक्षा की बोर्ड परीक्षा में भी यह थाने शहर में प्रथम व मुंबई विभाग की वरीयता सूची में तृतीय स्थान प्राप्त कर चुका है।

समीर पूज्य गुरुदेव के बताये अनुसार रोज सुबह तुलसी के ५-७ पत्ते चबाकर पानी पीता है, १० प्राणायाम एवं 'श्रीआसारामायण' का पाठ करता है। आश्रम से प्रकाशित मासिक पत्रिका 'ऋषि प्रसाद' हमारे घर में आती है। उसे भी यह जरूर पढ़ता है। सफलता की आकांक्षा रखनेवाले सभी विद्यार्थियों को यह पत्रिका अवश्य पढ़नी चाहिए।

- सुलभा तलवड़ेकर, श्री चिंतामणि को.हौ.सो., कोलीवाड़ा, थाने (पूर्व), महा.।

अखबारों के झरोखे से...

अमर उजाला (चण्डीगढ़, १६ जून २००४)

गुरु की शरण में मिलता है सुख

बुराई से बचोगे तो भलाई होने लगेगी : संत आसारामजी बापू

चण्डीगढ़। 'व्यक्ति को बुराई से बचना चाहिए। ऐसा करने से अच्छाई अपने-आप आ जायेगी। व्यक्ति को लघु (तुच्छ, नश्वर) सुख की अपेक्षा बड़े (परमात्म) सुख के पीछे दौड़ना चाहिए। लघु सुख हमें भौतिक पदार्थों से मिलता है, जबकि बड़ा सुख गुरु की शरण में जाने से मिलता है और आत्मिक शांति देता है।' ये विचार आज स्यूंक स्थित 'संत श्री आसारामजी आश्रम' में 'गुरुपूर्णिमा महोत्सव' के पहले दिन संत श्री आसारामजी बापू ने व्यक्त किये।

हजारों की संख्या में श्रद्धालुओं ने सद्गुरुदेव के दर्शन किये और सत्संग का लाभ लिया। सुबह के समय सत्संग के समापन का माहौल बेहद रोमांचक था। पूज्य बापूजी के साथ सभी भक्तजन 'हरि ॐ' का उच्चारण कर रहे थे। कई भक्तजन इस ध्वनि की मस्ती में मदमस्त होकर नाच रहे थे तो कई हँसने व रोने में तल्लीन थे। इस अवसर पर बापूजी ने श्रद्धालुओं को योगासन भी करवाये, जिनसे बीमारियों को दूर भगाया जा सकता है। बापू आसारामजी ने 'गुरुपूर्णिमा' के महत्त्व पर भी प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन में प्रेम करना चाहिए और यह प्रेम मात्र भौतिक वस्तुओं से नहीं, बल्कि परमात्मा से होना चाहिए। बापूजी ने इस बात पर भी जोर दिया कि नारी को स्वयं को अबला नहीं समझना चाहिए, बल्कि अपनी शक्ति को पहचानना चाहिए।

व्यवस्थाओं से खुश हैं बाहर से आये भक्तगण

चण्डीगढ़। 'गुरुपूर्णिमा' और संत श्री आसारामजी बापू का सत्संग अर्थात् एक साथ दो-दो लाभ... तो कौन-सा शिष्य इस समारोह से वंचित रहना चाहेगा ? 'गुरुपूर्णिमा' के समय गुरुपूजा और पास से गुरु के दर्शन से जो सुख भक्तजनों को मिलता है, उसका बयान करना भी मुश्किल है। यह कहना है बापूजी को सुनने आये भक्तजनों का। स्यूंक गाँव स्थित 'संत श्री आसारामजी आश्रम' में 'गुरुपूर्णिमा' के अवसर पर आयोजित सत्संग-समारोह चण्डीगढ़ से बाहर बसे अन्य शहरों के शिष्यों को भी अपनी ओर खींच लाया है। हजारों की संख्या में पंजाब, हिमाचल, हरियाणा व उत्तरांचल से भक्तजन सत्संग सुनने, गुरु की पूजा करने व दीक्षा लेने आये हैं। सत्संग का लाभ लेने आये भक्तजन यहाँ की व्यवस्थाओं से भी काफी खुश हैं।

गुरुदासपुर से आये सतीश कुमार बताते हैं कि दो साल पहले उन्होंने बापूजी से दीक्षा ली थी और प्रत्येक वर्ष 'गुरुपूर्णिमा' के समय अमदावाद जाते थे, लेकिन इस बार उन्हें स्यूंक गाँव में ही गुरुदर्शन का अच्छा मौका मिला। वे बताते हैं कि बापूजी के प्रवचन सुनकर आनंद और आत्मिक शांति मिल रही है। गुरुदासपुर से ही आयी कंचन समारोह की व्यवस्था से काफी खुश हैं और कहती हैं कि उन्हें पानी आदि आराम से मिल रहा है। परवाणु से आयीं भावना बताती हैं कि यदि बापूजी का यहाँ सत्संग न होता तो उन्हें 'गुरुपूर्णिमा' पर बापूजी की पूजा करने के लिए दिल्ली जाना पड़ता।

पंजाब केसरी (दिल्ली, २० जून २००४)

'भजन करो, भोजन करो, रोजी पाओ'

नई दिल्ली (सं.) : अपनी ज्ञानमयी ओजस्वी वाणी से जन-जन में आध्यात्मिक चेतना की लौ जगानेवाले तथा लोक-कल्याणकारी कार्यों द्वारा सामाजिक उत्थान का बिगुल बजानेवाले लोकसंत श्री आसारामजी बापू ने समाज के शोषित, पिछड़े, बेरोजगार तथा निराश्रित वर्गों की सहायता के लिए एक नयी पहल की। गुजरात, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र आदि राज्यों के आदिवासी, पिछड़े तथा ग्रामीण इलाकों में उन्होंने एक नयी योजना की शुरुआत की है, जिसके अंतर्गत वहाँ के गरीब, बेरोजगार तथा बेसहारा लोगों को यह कहा जाता है कि वे आश्रम में तथा आश्रम द्वारा संचालित समितियों के केन्द्रों में आकर दिनभर केवल भगवन्नाम-जप, भजन, कीर्तन तथा ध्यान करें। इसके बदले उन्हें दिन का भोजन और शाम को घर जाते समय २० से ३० रुपये तक नकद दक्षिणा दी जाती है। इसमें भाग लेनेवालों की संख्या बढ़ती ही जा रही है। इससे जहाँ लोगों को भोजन की विकट समस्या से निजात मिलता है, वहीं उनका आध्यात्मिक उत्थान भी हो रहा है। इससे बेरोजगार लोगों में आपराधिक प्रवृत्ति को रोकने में बहुत सहायता मिलेगी।

पूज्य संत श्री आसारामजी बापू ने आज यह जानकारी रजोकरी आश्रम में आयोजित 'गुरुपूनम समारोह' में एकत्रित विशाल जनसमूह को संबोधित करते हुए दी। उन्होंने बताया कि इस नयी योजना का नारा है : **'भजन करो, भोजन करो, रोजी पाओ।'**

लोकमत (नागपुर, २४ जून २००४)

सत्संग से पाप नष्ट हो जाते हैं : पूज्य बापूजी

लोक सेवा, नागपुर, २३ जून। पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू ने सत्संग की महिमा का बखान करते हुए कहा कि सत्संग से करोड़ों पाप नष्ट हो जाते हैं। 'गुरुपूर्णिमा' के उपलक्ष्य में रेशमबाग मैदान 'हरि ॐ धाम' में जारी तीन दिवसीय सत्संग समारोह के समापन सत्र में पूज्य बापूजी विशाल जनसमुदाय को संबोधित कर रहे थे।

मौन को एक बड़ी शक्ति निरूपित करते हुए उन्होंने कहा कि जिस प्रकार संभोग से शक्ति का ह्रास होता है, उसी प्रकार अधिक बोलने से जीवनशक्ति का ह्रास होता है। अतः मौन रखिये। इससे विवेक बढ़ेगा। ज्यादा बोलने से कलह बढ़ता है। गाँधीजी की तरह हफ्ते में एक दिन मौनव्रत अवश्य रखें।

पूज्य बापूजी ने कहा कि लोग बेडरूम तो बनाते हैं लेकिन पूजाघर नहीं बनाते। पहले पति-पत्नी एक साथ नहीं सोते थे। यह संस्कृति विदेशों से आयी है। कमरतोड़ करनेवाले बेडरूम के साथ ही रामरूम अर्थात् पूजाघर भी बनायें। उन्होंने कहा कि शुद्ध ज्ञान हमेशा एक जैसा रहता है। वह ऐहिक ज्ञान और अज्ञान को जानता है, known-unknown को जानता है, शुद्ध और अशुद्ध को भी जानता है। वह ईश्वर को भी जानता है और ईश्वर की प्रार्थना करनेवाले को भी।

अपने दोषों को स्वीकार करना और संसार असार है यह जानना ही शुद्ध विवेक है। शुद्ध विवेक वह है जो नश्वर को नश्वर बताये और शाश्वत से प्रीति कराये। ब्रह्म-परमात्मा का ज्ञान ही शुद्ध ज्ञान है।

रेशमबाग मैदान में आश्रम द्वारा संचालित बाल संस्कार केन्द्र की भव्य प्रदर्शनी लगायी गयी, जो विद्यार्थियों और शिक्षकों के लिए आकर्षण का केन्द्र बनी रही। यहाँ बापूजी के अहमदाबाद आश्रम की ओर से आये आयुर्वेद, होम्योपैथी, प्राकृतिक चिकित्सा एवं एक्यूप्रेशर चिकित्सा के निष्णात चिकित्सकों ने अपनी निःशुल्क सेवाएँ दीं।

हर किसीकी जुबान पर एक ही नाम था : 'हरि ॐ'

प्रवेशद्वार से प्रवेश करते ही भजन 'ॐ नमः शिवाय।' के मिश्री घोलते बोल सुनायी पड़ते हैं। चाहे वह बच्चा हो या युवा या फिर वृद्ध, हर किसीकी जुबान पर एक ही बोल है 'हरि ॐ' और अंतर्मन में है पूज्य बापूजी के प्रति अपार श्रद्धा। कहीं पर श्रद्धालु ढोलक की थाप पर नाचते-झूमते भजन गा रहे हैं तो कहीं पर धार्मिक पुस्तक पढ़ने में मग्न हैं। प्रवचन शुरू होने में समय है फिर भी पंडाल में मौजूद हैं हजारों लोग। यह दृश्य था हरि ॐ धाम (रेशमबाग मैदान) का। पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू के तीन दिवसीय 'गुरुपूर्णिमा महोत्सव' के दौरान सारा वातावरण 'ॐ-हरि ॐ' की गूँज से 'हरिॐ' मय हो उठा है।

पूज्य बापूजी के सत्संग में हाजिरी लगाने के लिए देश के विभिन्न इलाकों से श्रद्धालु आये हैं। अलग-अलग रंग-रूप और परिधानवाले श्रद्धालुओं में सिर्फ धार्मिक प्रवृत्ति की महिलाएँ एवं पुरुष नहीं हैं, बल्कि बच्चे और युवा, सुशिक्षित और व्यवसायी भी हैं। सभीके हृदय में बापूजी विराजमान हैं सद्गुरु के रूप में, सभी चमत्कृत हैं उनके करिश्माई व्यक्तित्व से।

'स्टेट बैंक ऑफ इंडिया' की जबलपुर शाखा के सेवानिवृत्त प्रबंधक आर.सी. ताम्रकार अपनी पत्नी दुर्गा के साथ जबलपुर से आये हैं। श्रीमती दुर्गा (६५ वर्ष) कहती हैं : "बापूजी बुला लेते हैं।" वे अब तक करीब आठ सत्संग-समारोहों में जा चुकी हैं। उन्होंने जबसे बापूजी से दीक्षा ली है, तबसे उनके जीवन में कई चमत्कार हुए हैं। उनके परिवार में सुख-शांति और समृद्धि आयी है। वे बताती हैं कि १५ दिन कोमा में रहने के बाद बापूजी की कृपा से ही वे ठीक हुईं।

नागपुर के सक्करदरा निवासी और वी.एन.आई.टी. में कम्प्यूटर साइंस में तृतीय वर्ष के छात्र विलास ने बताया कि अपने माता-पिता के कहने पर उसने दीक्षा ली। उसका कहना है कि सत्संग से शांति मिलती है और मन के सभी विकार दूर हो जाते हैं। उसके मन में दृढ़ विश्वास है कि किसी भी कार्य के आरंभ में बापूजी का नाम लेने से सफलता मिलती है।

पंडाल में एक स्थान पर छत्तीसगढ़ के दुर्ग से आये हुए पुरुष एवं महिलाएँ भक्ति में लीन होकर ढोलक की थाप के साथ झूमते हुए भजन गा रहे हैं। पंडाल के आसपास के लोग भी इस समूह के साथ भजन गुनगुना रहे हैं।

लोग एक-दूसरे से बातचीत के पूर्व 'हरि ॐ' बोलते हैं। पेयजल-वितरण की जगह पर भी लोग 'हरि ॐ' कहकर ही पानी पीते हैं। कुछ लोगों ने बापूजी की फोटोवाली टी शर्ट पहन रखी है तो कुछ ने बापूजी के फोटोवाला बिल्ला लगा रखा है।

R.N.I. NO. 48873/91 POSTAL REGISTRATION. NO. GUJ-1132. LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENSE NO. 207. POSTING FROM AHMEDABAD 2-15 OF EVERY MONTH. ✲ BYCULLA STG. WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO. 236. REGD NO. TECH/47 833/MBI/2003-05 POSTING FROM MUMBAI 9 & 10 OF EVERY MONTH. ✲ FOREIGN POSTING 5 & 6 OF EVERY MONTH FROM AIRPORT PO. - 400099. ✲ DELHI REGD. NO. DL-11513/2003-05 WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO.-U(C) 232/2003-05 POSTING FROM DELHI 5 & 6 OF EVERY MONTH.